NIRAJ KUMAR

रहस्य की कहानियां

- ऐडगर ऐलन पो

meshchandra R. Chhaya

रहस्य की कहानियां

एडगर एलन पो



15.1.2

हिन्द पॉकेट बुक्स प्राइवेट लिमिटेड
जी०, टी० रोड, शाहदरा, दिल्ली

कहानियां

१ | शराब का पीपा

फार्चूनेटो ने हजारों बार मेरा नुकसान किया। मैं उन्हें सह गया। लेकिन जब वह अपमान करने पर उतर आया तो मैंने भी उससे बदला लेने का प्रण कर लिया। आप मेरा स्वभाव जानते ही हैं, इसलिए आप यह तो समझ ही गए होंगे कि मैंने उसे किसी प्रकार की धमकी तो दी हा नहीं होगी। लेकिन, मुझे अन्ततः इस आदमी से बदला लेना है, यह बात निश्चित थी। जिस प्रकार यह निश्चय किया गया था, उसी से स्पष्ट है, कि मैं किसी प्रकार का खतरा अपने सिर मोल नहीं लेना चाहता था। मैं उसे केवल सजा ही नहीं देना चाहता था, बल्कि ऐसी सजा देना चाहता था जिससे मैं किसी खतरे में न पड़ूं। वह बदला ही क्या हुआ जिसमें बदला लेने वाला ही फंस जाए और दण्ड का भागी बने। बदला उस समय भी पूरा नहीं होता जब मैं समझूं मैंने बदला ले लिया और जिससे बदला लिया जाए, उसपर कोई प्रभाव ही न पड़े।

मैंने अपने किसी भी कार्य या शब्द द्वारा फार्चूनेटो को अपने ऊपर सन्देह नहीं होने दिया। मैं जब भी उसके सामने होता अपनी आदत के अनुसार बराबर मुसकराता ही रहता। यह क्रम मैंने बराबर जारी रखा। वह यह कभी जान न पाया कि जब मैं मुसकराता हूं तो मेरे मन में बदले की भावना रहती है।

वैसे यह फार्चूनेटो बड़ा अच्छा था; आदर करने योग्य और एक हद तक ऐसा भी कि उससे भय खाया जाए। किन्तु उसकी एक कमजोरी थी और यह थी शराब। उसे इस बात का बड़ा गर्व था कि उसे हर तरह की शराब पीने का अनुभव है और वह चखकर ही बतला सकता है कि जो शराब जिस नाम से दी जा रही है, वह असली

है या नहीं। बहुत कम इटालियनों में आलोचनात्मक प्रवृत्ति होती है। समय और स्थल के अनुकूल ही वे बन जाते हैं और अंग्रेज तथा आस्ट्रियन लखपतियों को खुश कर अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। चित्रकला और रत्नों की परख के काम में तो फार्चूनेटो भी अपने देश के लोगों की भांति नीम-हकीम ही था; लेकिन जहां तक पुरानी मदिरा का सम्बन्ध है, उसके ज्ञान पर संदेह नहीं किया जा सकता। इस मामले में मुझमें और उसमें अधिक अन्तर नहीं था। मैं स्वयं इटालियन मदिरा का विशेषज्ञ था, और जब भी जेब में पैसे होते थे काफी मात्रा में शराब खरीद लेता था।

एक दिन शाम को अंधेरा हो चुका था। मेलों, तमाशों (कार्नीवाल) के दिन थे। तभी मेरी अपने इस मित्र से मुलाकात हो गई। उन्होंने मिलते ही बड़े तपाक से हाथ मिलाया। ऐसा लग रहा था कि उन दिनों वह बहुत शराब पी रहा था। उसने रंग-बिरंगे कपड़े पहन रखे थे। नीचे चुस्त, कई रंगों की पट्टियों से बनी पैंण्ट उसने पहन रखी थी और सिर पर जोकरों की तरह नुकीली टोपी पहन रखी थी, जिसमें घण्टियां लगी थीं। मैं सोच रहा था, अच्छा होता यदि मैंने इससे हाथ न मिलाया होता।

मैंने कहा, "प्यारे दोस्त, अच्छा हुआ जो सौभाग्य से तुम मिल गए। आज तो बड़े अच्छे लग रहे हो। मैंने शराब का एक पीपा खरीदा है। शराब का नाम है एमाण्टिलेडो। मुझे शक है कि जो शराब मैंने खरीदी है, वह असली है या नहीं।"

"कैसे?" उसने कहा, "एमाण्टिलेडो? एक पूरा पीपा? असंभव! मेले के इन दिनों में उसका पीपा मिल जाना बिलकुल असंभव है।"

"मुझे भी शक है।" मैंने उत्तर दिया, "मैंने मूर्खतावश पूरे पीपे के पैसे भी चुकता कर दिए। तुमसे राय न ले पाया। तुम्हारा कहीं पता ही नहीं लगा। और मुझे भय था कि चीज हाथ से कहीं निकल न जाए।"

"एमाण्टिलेडो!"

"मुझे शक है।"

"एमाण्टिलेडो!"

"मुझे पहले अपना शक दूर करना है।"

"एमाण्टिलेडो?"

"तुम बहुत व्यस्त लग रहे हो, इसलिए मैं लुकरेसी के पास जा रहा हूं। यदि कोई शराब चखकर उसकी असलियत बता सकता है तो, वही। वह मुझे बता देगा कि···

"लुकरेसी, शेरी और एमाण्टिलेडो का भी फर्क नहीं बता सकता।"

"फिर भी कुछ ऐसे बेवकूफ हैं, जो यह मानते हैं कि तुम्हारी और उसकी योग्यता में कोई फर्क नहीं ।"

"अच्छा, आइए, चलें।"

"कहां?" मैंने पूछा।

"आपके शराबखाने।"

"नहीं मित्र! मैं तुम्हारी भलमनसाहत का नाजायज फायदा नहीं उठाऊंगा। मुझे लगता है तुम्हें कुछ काम है। लुकरेसी···

"नहीं मुझे कोई काम नहीं है—आइए।"

"नहीं, मुझे आपकी व्यस्तता की चिन्ता नहीं है। मुझे चिन्ता है आपके जुकाम की। शराबखाना (जमीन के नीचे होने की वजह से) बड़ा नम है। दूसरे वहां शोरा भरा पड़ा है।"

"फिर भी, मैं चलूंगा। मुझे सर्दी-जुकाम की फिक्र नहीं है। एमाण्टिलेडो! आपको किसी ने कुछ और चीज दे दी है। और जहां तक लुकरेसी का सम्बन्ध है, उसमें शेरी और एमाण्टिलेडो का अन्तर समझने की भी तमीज नहीं है।"

यह कहते हुए उसने मेरा हाथ थाम लिया। मैंने अपने मुंह पर काली रेशमी नकाब डाल ली और तेजी के साथ उसे अपने घर की तरफ ले गया।

घर पर कोई नौकर नहीं था। वे भी मेले-तमाशे (कार्नीवाल) का आनन्द लेने चल दिए थे। मैंने उनसे कह दिया था कि मैं रात को नहीं लौटूंगा और वे घर छोड़कर हरगिज़ बाहर न जाएं। मुझे मालूम था कि मेरा इतना हुक्म (मेरे पीठ मोड़ते ही) उनके घर से गायब हो जाने के लिए काफी था।

मैंने नौकरों के रहने की जगह से दो मशालें उठाईं। एक मैंने फार्चूनेटो को पकड़ाई और दूसरी स्वयं पकड़ी। उसके बाद मैंने झुककर उससे अपने पीछे आने का अनुरोध किया। कई कमरों को पारकर हम उस जगह पहुंचे जहां से शराब वाले तहखाने को रास्ता जाता था। मैं लम्बी सीढ़ियों से नीचे उतरा। अपने पीछे आ रहे फार्चूनेटो से मैं बार-बार अति सावधान रहने का अनुरोध करता जा रहा था। अन्ततः हम लोग सीढ़ियों से नीचे उतर आए। यहां हम नम ज़मीन पर माण्ट्रेसरों की कब्रों पर खड़े थे। मेरे मित्र के कदम बड़े डगमगाते-से पड़ रहे थे। उसकी टोपी की घंटियां बार-बार बज जाती थीं।

"वह पीपा," उसने कहा।

"वह आगे है" मैंने कहा, "इस तहखाने में मकड़ियों के ये जाले कैसे चमक रहे हैं, इनको तो देखिए।"

उसने मुड़कर मेरी तरफ देखा। उसकी दोनों आंखें नशे की वजह से अंगारे जैसी सुर्ख हो रही थीं।

"शोरा?" आखिर उसने पूछा।

"हां शोरा है।" मैंने उत्तर दिया, "लेकिन ये खांसी तुम्हें कब से है?"

"खों! खों! खों!—खों! खों! खों!—खों! खों! खों!"

मेरा मित्र काफी देर तक मुझे जवाब न दे सका।

"यह कुछ नहीं है!" आखिरकार उसने कहा।

"आओ," मैंने निश्चयात्मक स्वर में कहा, "हम वापस चलें। तुम्हारी तबीयत काफी खराब है। तुम धनी हो, लोग तुम्हारी इज़्ज़त

करते हैं, तुम्हें सराहते हैं, चाहते हैं; तुम अब भी उतने ही खुश हो, जितना मैं कभी था। तुम्हारी याद सबको सताएगी। मेरी तो कोई बात नहीं है। चलो, हम वापस चलें। तुम बीमार पड़ जाओगे। मैं इसकी ज़िम्मेवारी नहीं लेता। इसके अलावा, लुकरेसी···

"बस, बस करिए।" उसने कहा, "यह खांसी कुछ नहीं है। खांसी से मैं मर नहीं जाऊंगा।"

"ठीक है।" मैंने कहा, "मैं तुम्हें डराना नहीं चाहता, लेकिन जितना संभव हो उतनी सावधानी तो रखनी ही चाहिए। इस मेडाक (एक प्रकार की शराब) से हम सर्दी से बचे रहेंगे।"

सामने आलमारी में रखी बोतलों में से मैंने तुरन्त शराब की एक बोतल खोल दी।

"लो पियो!" कहते हुए मैंने वह बोतल आगे कर दी।

उसने बड़े रस से बोतल होंठों से लगा ली। कुछ क्षणों बाद उसने पूर्व परिचित ढंग से सिर हिलाया। घंटियां फिर बज उठीं।

"मैं उन सबके नाम पर वह शराब पीता हूं जो यहां दबे हैं।"

"मैं तुम्हारे दीर्घ जीवन की कामना करता हूं।" मैंने कहा। उसने फिर मेरा हाथ पकड़ लिया और हम आगे चल दिए।

"आपके ये तहखाने," उसने कहा, "तो बड़े लम्बे-चौड़े हैं।"

"माण्ट्रेसरों का परिवार काफी बड़ा था।" मैंने उत्तर दिया।

"आपका पारिवारिक निशान क्या है? मैं हमेशा भूल जाता हूं।"

"हरे-नीले खेत में बड़ा मज़बूत-सा पांव। पंजे के नीचे सांप दबा है और उसके दांत ज़मीन में एड़ी के नीचे धंसे हैं।"

"और लिखा क्या है?"

"नेमो मी इम्प्यून···आदि।"

"बहुत ठीक!" उसने कहा।

उसकी आंखों से शराब एक बार फिर चमक गई। टोपी में लगी घंटियां फिर बज उठीं। मेडाक के नशे में मेरी कल्पना-शक्ति स्वयं प्रखर हो उठी थी।

हम लोग कंकालों के ढेरों से बनी लम्बी दीवार पार कर चुके थे। इन कंकालों के बीच-बीच में, कहीं-कहीं काफी अन्दर जाकर तरह-तरह की शराबों के पीपे रखे थे। मैं क्षण भर के लिए रुका। इस बार मैंने कोहनी से ऊपर उसका हाथ फिर थाम लिया।

"देखो, शोरे की मात्रा यहां बढ़ रही है।" मैंने कहा, "तहखाने की छतों पर वह काई की तरह लिपटा है। हम लोग ठीक नदी की तलहटी के नीचे हैं। आओ, हम वापस चलें, बड़ी देर हो जाएगी।··· "तुम्हारी खांसी···"

"खांसी-वांसी मुझे कुछ नहीं है," उसने कहा, "लेकिन इसके आगे चलने के लिए मेडाक का दूसरा दौर जरूरी है।"

मैंने फिर 'फ्लैगन डी ग्रेव' (नाम) शराब की एक बोतल का मुंह खोला। उसने एक ही सांस में पूरी बोतल साफ कर दी। इसके बाद हंसकर उसने बोतल, अर्थभरी अदा से कुछ इशारा करते हुए, ऊपर को उछालकर फेंक दी। इसका अर्थ मेरी समझ में नहीं आया।

मैंने उसकी तरफ आश्चर्य से देखा। उसने फिर वही इशारा दोहराया—अजीब-सा था।

"तुम नहीं समझे?" उसने पूछा।

"नहीं," मैंने उत्तर दिया।

"तो तुम ब्रदरहुड के आदमी नहीं हो।"

"कैसे?"

"तुम 'मासन ब्रदरहुड' के सदस्य नहीं हो।"

"हां, हां, हूं।" मैंने कहा, "हां, हां।"

"तुम, असंभव! तुम इस समाज के सदस्य नहीं हो।"

"मैं मासन हूं।" मैंने उत्तर दिया।

"निशान बताओ!" उसने कहा, "अपना निशान बताओ।"

"यहां रहा।" कहते हुए अपने कपड़ों में से मैंने कन्नी निकाल दी।

"तुम तो मजाक करने लगे।" उसने कहा, "लेकिन हम लोग एमाण्टिलेडो के पीपे के पास चलें।"

मैंने अपने लबादे के नीचे कन्नी छिपा ली। अपना हाथ फिर आगे बढ़ा दिया। वह मेरे हाथ पर अपने सारे वजन से झुक गया। हम अंधेरी जगहों से होते हुए ऐसे स्थान पर पहुंचे जहां हमारे हाथ की मशालें जलने के बजाय केवल चमक रही थीं।

एक गुफानुमा तहखाने का जहां अन्त होता, वहीं से दूसरी ओर भी पतली गुफा शुरू हो जाती थी। हम लोग इसमें भी घुस गए। हमारे पास दोनों ओर तहखाने की छत तक हड्डियों का ढेर चिना था। यहां हड्डियों की चिनाई पेरिस के ढंग से की गई थी। तीन ओर गुफा में बेल-बूटे कढ़े थे। चौथी तरफ हड्डियां इधर-उधर बिखरी पड़ी थीं। हड्डियां जहां से हटी पड़ी थीं, वहां भी दीवार पर बेल-बूटे कढ़े थे। यहीं पास से हमें एक पतली गुफा का रास्ता भी दिखलाई पड़ रहा था। वह चार फीट गहरी थी, तीन फीट चौड़ी और छह या सात फीट ऊंची थी। वह तहखाना किसी काम के लिए नहीं बल्कि दो बड़ी-बड़ी गुफाओं वाली कब्रगाहों को संभालने के लिए बनाया गया था।

फार्चूनेटो ने अपनी मशाल ऊपर उठाकर गुफा के अन्दर की गहराई देखने का असफल प्रयत्न किया। हम कुछ भी देख नहीं सके।

"अन्दर घुस जाओ," मैंने कहा, "एमाण्टिलेडो का पीपा इसी में है जहां तक लुकरेसी का—"

"वह तो बिलकुल नीम-हकीम है," मेरे मित्र ने मेरी बात बीच में काट दी और आगे बढ़ गया। मैं भी उसके पीछे-पीछे चला। कुछ ही क्षणों में वह एक बड़े आले के सामने पहुंचकर रुक गया और आगे का रास्ता बन्द पाकर भौंचक्का-सा खड़ा रह गया। उसकी समझ में ही नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। क्षण बाद ही मैंने उसे गुफा के द्वार तक पहुंचा दिया। गुफा की ऊपरी सतह पर दो लोहे के कुन्दे थे। दोनों के बीच की दूरी कोई दो फीट थी। इन कुन्दों में से एक में सांकल पड़ी थी और दूसरी में ताला था। कमरे में सांकल लपेटकर उसे ताले से बांध देने में अधिक समय नहीं लगा। वह इतना

चकित था कि ज़रा भी विरोध नहीं कर सका। ताले से चाबी निकाल लेने के बाद मैं उस गुफा के प्रवेश भाग से बाहर चला आया।

"अब अपना हाथ दीवार पर फेरो" मैंने कहा, "तुम्हें पता चल जाएगा कि वहां शोरा है। है भी वह बड़ी नम और गीली जगह। मैं तुमसे फिर कहता हूं कि लौट आओ। नहीं तो फिर मुझे तुम्हें अपने हाल पर ही छोड़ देना होगा। लेकिन मुझे यथाशक्ति तुम्हारी जो सेवा हो सके वह कर देनी चाहिए।"

"एमाण्टिलेडो?" मेरे मित्र ने कहा। वह अभी तक आश्चर्ययुक्त नहीं हो पाया था।

"सच है।" मैंने उत्तर दिया, "वहां एमाण्टिलेडो ही है।"

यह कहते-कहते मैंने उस हड्डियों के ढेर में अपना काम शुरू कर दिया, जिसकी चर्चा मैं कर चुका हूं। उस ढेर को एक तरफ करके मैंने उसके नीचे से गारा और पत्थर निकाल दिया। इसकी और अपने पास के गारा फैलाने के औजार कन्नी की सहायता से मैंने उस तहखाने का मुंह बंद करने का काम शुरू कर दिया। अभी मैंने गारे की पहली पर्त ही बिछाई थी कि मैंने अनुभव किया कि मेरे मित्र का नशा काफी उतर गया है। इसका सबसे पहला संकेत मुझे उस गुफा के तल से आने वाली कराहने की आवाज़ से मिला। वह कराह किसी नशे में डूबे आदमी की नहीं हो सकती। इसके बाद काफी देर तक शान्ति रही। मैं गारे और पत्थर की एक के बाद एक करके पर्त चढ़ाता हुआ दीवार बनाता गया। इसके बाद मैंने सुना कि कोई बड़े ज़ोर से साकल हिला रहा है। यह आवाज़ कई मिनटों तक आती रही। इस आवाज़ को मैं कान लगाकर, काम बंद करके, बड़े सन्तोष से सुनता रहा। इस बीच मैं हड्डियों के ढेर पर बैठा रहा। आखिरकार जब साकल का हिलना बन्द हो गया तो मैं सातवीं पंक्ति तक बड़े आराम से काम करता रहा। अब दीवार करीब-करीब मेरी छाती के बराबर हो गई थी। मैं कुछ देर के लिए रुका और मशाल के ज़रिए हलकी-सी रोशनी अन्दर डाली।

तत्काल ही अन्दर से ज़ोर-ज़ोर से चीखों की आवाज़ आने लगी। सांकल में जकड़ा व्यक्ति बुरी तरह चिल्ला रहा था। चीखों की आवाज़ से डरकर मैं एकदम पीछे हट गया। एक क्षण के लिए मैं सहम गया, कांप-सा गया, परन्तु जल्दी से संभल भी गया। मैंने अपने हाथों से गुफा की दीवार पकड़ ली। मैं भी अन्दर के आदमी की तरह ही चिल्लाने लगा। मैंने उसकी चीखों की आवाज़ों को और बढ़ा दिया या यों कहिए, उसकी चिल्लाहट मेरी चीखों से दब गई और वह चुप हो गया।

आधी रात बीत गई थी। मेरा काम खत्म हो गया था। मैंने पत्थरों की आठवीं, नवीं और दसवीं पंक्ति एक पर एक बिछा दी। मैं आखिरी पंक्ति के अंतिम पत्थर पर प्लस्तर बिछाने जा रहा था। पत्थर भारी था और मुझे उसे उठाने के लिए काफी ज़ोर लगाना पड़ रहा था। मैंने उसको अंशतः उस तरह रख भी दिया था जिस तरह मुझे रखना चाहिए था। तभी हलकी-सी हंसी की आवाज़ आई। यह हंसना सुन मेरे सिर के बाल एकदम खड़े हो गए। इसके बाद ही किसी ने दुःखित भाव से कुछ कहा। मैं कुछ कठिनाई के बाद पहचान गया कि यह आवाज़ फाचूं नेटो की ही है।

"हा! हा! हा!···ही! ही!ही!···अच्छा मज़ाक किया! सचमुच बड़ा अच्छा मज़ाक किया! घर वापस पहुंचने पर शराब पीते हुए इस घटना को याद करके हम लोग खूब हंसेंगे।···ही! ही!ही!"

"एमाण्टिलेडो।" मैंने कहा।

"ही! ही! ही!ही!··· ही! ही!···हां एमाण्टिलेडो।"

"लेकिन अब हमें घर पहुंचने के लिए देर नहीं हो रही? क्या घर पर लेडी फाचूं नेटो तथा अन्य लोग मेरी प्रतीक्षा न कर रहे होंगे? अब चलना चाहिए।"

"हां!" मैंने कहा, "अब चलना चाहिए।

"माण्ट्रेसर! ईश प्रार्थना के लिए।"

"हां!" मैंने कहा, "उसी के लिए सही।"

लेकिन इन शब्दों का जवाब नहीं मिला। मैं अधीर होने लगा। मैंने ज़ोर से आवाज़ दी—"फार्चूनेटो!"

कोई उत्तर नहीं मिला। मैंने फिर आवाज़ दी—"फार्चूनेटो।"

अब भी कोई जवाब नहीं था। मैंने पत्थर में जो एक छेद था उसी से मशाल अन्दर घुसेड़ दी और उसे नीचे गिरा दिया। उसके गिरने से केवल टोपी में लगी घंटियों के बजने की आवाज़ ही सुनाई दी। मैं अत्यन्त दुःखी हो गया। तहखाने की नमी के कारण ही ऐसा हुआ था। मैंने जल्दी ही अपना काम खतम किया। मैंने अंतिम पत्थर को भी उसके स्थान पर बैठाया, उसपर पलस्तर बिछाया। इसके बाद नई दीवार के सामने हड्डियों की चिनाई कर दी जिससे वह दीवार छिप जाए, जिसे मैंने बनाया था। अब पिछले पचास वर्ष से उन हड्डियों को किसी ने नहीं छुआ है।

२ | बोतल में मिली पाण्डुलिपि

मुझे अपने देश या परिवार के बारे में कुछ भी नहीं कहना है। बहुत दिनों तक बाहर रहने के कारण ये दोनों ही मुझसे छूट गए। मेरे पास सम्पत्ति बहुत थी, इसलिए मुझे साधारण से कहीं अधिक अच्छी शिक्षा मिली। आरंभ में परिश्रमपूर्वक अध्ययन करके मैंने जो ज्ञान अर्जित किया था, बाद में उस ज्ञान को अपने दार्शनिक या चिन्तन-प्रिय स्वभाव के कारण व्यवस्थित रीति से रुचा-पचा लेने में बड़ी सहायता मिली। जर्मन दार्शनिकों के ग्रंथ पढ़ने में अन्य पुस्तकों की अपेक्षा मुझे बड़ा आनन्द आता था। इसका कारण यह नहीं था कि मुझे उनकी वाणी-सिद्धि के पागलपन की सराहना करने की गलत शिक्षा दी गई थी, बल्कि इसका कारण मेरी चिन्ता या विचारशीलता का वह सुनिश्चित ढंग था जिसकी सहायता से मैं उनके दोषों को तुरन्त देख लेता था। प्रतिभा के अभाव की दृष्टि से बहुधा मेरी आलोचना की गई है। मुझमें कल्पना-शक्ति का भी परम अभाव बतलाया गया है। अपने संशयात्मक मतों के लिए भी मुझे काफी बदनाम होना पड़ा है। मुझे भौतिक-दर्शन में बड़ा आनन्द आता है। इसी कारण मैं भी वैसी ही भूलें करता हूं जैसी अन्य लोग करते हैं, अर्थात् किसी विशिष्ट-विज्ञान के सिद्धान्तों की बातचीत करते हुए मैं ऐसी घटनाओं की चर्चा कर देता हूं जिनका उन सिद्धान्तों या विषय से कोई सम्बन्ध नहीं होता। अतएव कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि मैं भी अपने पूर्व विश्वासों के कारण सत्य से उतना ही दूर जा सकता हूं जितना अन्य कोई व्यक्ति अपनी पूर्व धारणाओं से। सत्य को खोज लेने की जो आशा मैं करता हूं, वह दुराशा भी सिद्ध हो सकती है। मैंने उक्त भूमिका इसलिए तैयार की है जिससे आप मेरी

इस कहानी को कल्पना न समझ लें, क्योंकि कहानी है ही ऐसी, जिस-पर आसानी से विश्वास नहीं किया जा सकता है। परन्तु यह कहानी मेरी अपनी अनुभूति है और मैं दिवास्वप्नों में डूबे रहने का आदी नहीं हूं।

वर्षों विदेश-यात्रा करने के बाद सन् १८—में मैं समृद्ध और घनी आबादी वाले जावा द्वीप में बटाविया बन्दरगाह से द्वीप-समूह के अन्य द्वीपों की जल-यात्रा के लिए रवाना हुआ। मुझे एक प्रकार की स्नायविक क्षीणता निरन्तर बेचैन रखती थी और इसी बेचैनी के कारण यह समुद्र-यात्रा करने का मैंने निश्चय किया था।

हमारा जहाज़ बड़ा सुन्दर था। जहाज का वज़न कोई चार सौ टन था। वह बम्बई बन्दरगाह में मालाबार के जंगलों की टीक लकड़ी का बना था तथा इसके तख्ते एक-दूसरे से तांबे के मज़बूत तारों से बंधे थे। जावा द्वीप से जहाज़ ने रुई और तेल लाद लिया था। जहाज़ पर जूट, घी, नारियल और अफीम भी लदी थी। माल की लदाई का काम ठीक तरह से नहीं हुआ था, फलस्वरूप जहाज एक तरफ से पानी में अधिक डूब-सा गया था।

जब हम रवाना हुए तो हवा बड़ी हलकी थी इसलिए जावा के पूर्वी तट पर हमें कई दिन अनुकूल वायु की प्रतीक्षा में रुका रहना पड़ा। इन दिनों ऐसी कोई घटना नहीं हुई जिससे हमारे दैनिक आकर्षणहीन कार्यक्रम में बाधा पड़ती। हां, जिस द्वीप-समूह की ओर हम जा रहे थे, उसी तरफ से आती हुई कुछ माल से भरी छोटी-छोटी नौकाएं अवश्य दिखलाई पड़ीं।

एक संध्या जब मैं डेक की रेलिंग पर झुका खड़ा था तो मैंने उत्तर-पश्चिम में बादल देखा। इसका वर्ण बड़ा ही विलक्षण था। इसके अलावा बटाविया से प्रस्थान करने के बाद मैंने यह पहला बादल देखा था। मैं सूर्यास्त तक इस बादल को बराबर देखता रहा। इस बीच वह बादल पूर्व और पश्चिम में फैल गया और क्षितिज में सफेद भाप की एक लम्बी लकीर-सी बन गई जो समुद्रतट-सी लगती थी।

इसके बाद शीघ्र ही मेरा ध्यान उदीयमान चन्द्रमा के वर्ण और समुद्र की लहरों ने आकृष्ट कर लिया। चन्द्रमा का रंग मटमैला लाल था। समुद्र में तेज़ी से परिवर्तन हो रहा था। जल फिर भी आवश्यकता से अधिक पारदर्शक था। मैं समुद्र की तलहटी तक आसानी से देख सकता था। मैंने झुककर देखा तो पता लगा कि जहाज़ पन्द्रह फैदम गहरे समुद्र में है। हवा बड़ी गरम हो गई थी और असह्य प्रतीत हो रही थी। हवा के झोंकों से ऐसा लगता था कि वह लोहे की जलती शलाकाओं को स्पर्श कर आ रही थी। रात के घिर आते ही हवा का चलना बिलकुल बंद हो गया और वातावरण अकल्पनीय ढंग से शान्त हो गया। मोमबत्ती की रोशनी ज़रा भी नहीं हिल रही थी। अंगूठे और अंगुलियों के बीच यदि आप बाल थाम लें तो उस बाल तक में ज़रा भी कम्पन उत्पन्न नहीं होता था। तथापि जहाज़ के कप्तान ने कह दिया कि खतरे की कोई बात नहीं है। जहाज़ के सारे पाल खोल दिए जाएं और लंगर उठा लिया जाए क्योंकि हम तट की ओर ही खिसके जा रहे थे। किसी भी आदमी से मौसम पर निगाह रखने के लिए नहीं कहा गया और सारे नाविक डेक पर टांग फैला-फैलाकर सो गए। अधिकांश नाविक मलयवासी थे। मुझे खतरे का आभास मिल रहा था, इसलिए मैं नीचे गया। सच तो यह था कि मुझे भारी तूफान आने का हर लक्षण दिखलाई दे रहा था। मैंने कप्तान को अपनी आशंका बतलाई। परन्तु न केवल उसने मेरी बात पर कोई ध्यान नहीं दिया, बल्कि मुझे उत्तर देने का भी बहाना किए बिना मेरे पास से चला गया। परन्तु मैं बेचैन था और इस बेचैनी की वजह से सो भी न पाया। कोई आधी रात गुज़र चुकी थी जब मैं डेक पर आ गया। मैंने ऊपर आने के बाद अभी अन्तिम सीढ़ी पर पैर रखा ही था कि मुझे पनचक्की के पाटों के चलने जैसी आवाज़ सुनाई दी। मैं चौंककर संभल भी न पाया था कि मैंने देखा, जहाज़ बुरी तरह हिल रहा है। दूसरे ही क्षण जहाज के एक कोने से दूसरे कोने तक फेनभरी ऊंची लहर दौड़ गई और मैं उसमें डूब गया।

लहर ने मुझे कई बार इधर से उधर पटका, क्योंकि मेरे पैर डेक के फर्श पर जम नहीं पाए थे।

परन्तु तूफान का भयंकर रौद्र रूप ही जहाज के लिए जीवनदायी सिद्ध हुआ। जहाज में यद्यपि पूरी तरह पानी भर गया था लेकिन पाल खुले थे और उनमें तूफानी हवा भरी थी इसलिए एक ही मिनट बाद पानी भरा जहाज समुद्र की सतह पर फिर आ गया। थोड़ी देर तो वह तूफान के थपेड़ों से कभी इधर तो कभी उधर झुकता रहा लेकिन अन्त में फिर सीधा हो गया।

दैव की किस कृपा से मैं बच गया, यह बतलाना कठिन है। समुद्र की तूफानी लहर के धक्के से किंकर्तव्यविमूढ़ होने के बाद जब मुझे होश आया तो मैंने देखा कि जहाज के अग्र भाग के डंडे और पतवार के गोल चौकोर वाले बीच के हिस्से में फंसा हूं। बड़ी कठिनाई से मैं खड़ा हो गया। परन्तु खड़े होने पर मैंने अनुभव किया कि मुझे चक्कर आ रहा है। ज्यों-ज्यों मैंने चारों ओर नज़र घुमाई, मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि तूफानी समुद्र के जिस भंवर में हम फंस गए थे, आखिर हम उससे किस प्रकार निकल पाए। कुछ देर बाद मैंने वृद्ध स्वीडिश यात्री की आवाज सुनी। यह वृद्ध जब जहाज चलने वाला था तभी उसपर चढ़ा था। मैंने ज्यों-त्यों करके उसे बुलाया। वह किसी तरह लुढ़कता-ढुलकता मेरे पास आया। जल्दी ही हम लोगों को पता लगा कि हम दो ही व्यक्ति उस तूफानी भंवर से जीवित बच पाए हैं। डेक पर जितने व्यक्ति थे, वे सब हम दो को छोड़कर बह गए थे। कप्तान और उसके साथी केबिनों में रहे थे इसलिए वे भी डूबकर मर गए होंगे क्योंकि इन केबिनों में पानी भर गया था। जहाज की रक्षा के लिए हम बिना सहायता के कुछ भी नहीं कर सकते थे। हमारे हाथ और पैर कुछ समय के लिए और फूल गए जब हमें लगा कि हम नीचे डूबे जा रहे हैं। जहाज के ऊपर लगे मोटे तार अवश्य तूफान की पहली चपेट में ही टूटकर उड़ गए होंगे क्योंकि यदि हम उनमें फंस गए होते तो उनसे हमारा निकलना सचमुच बड़ा कठिन

हो जाता। हम पानी में डूबने से अवश्य बच गए थे लेकिन जहाज में यत्र-तत्र-सर्वत्र पानी भरा था। मस्तूल का काफी भाग टूट गया था; अन्य दृष्टियों से भी जहाज को काफी नुकसान पहुंचा था। परन्तु हमें यह देखकर बड़ी खुशी हुई कि जहाज के पानी उलीचने वाले पम्प खराब नहीं हुए थे। तूफान का उग्रतम रूप समाप्त हो चुका था। अब वायु के थपेड़ों से कोई भय नहीं था। परन्तु तूफान रुका नहीं। फलतः हमें विश्वास हो गया कि हम दोनों, जो दशा हमारी थी, उसमें तूफान के दुबारा आने पर अवश्य ही मर जाएंगे। परन्तु हमारी यह आशंका पुष्ट नहीं हो पा रही थी। पांच दिन और पांच रात लगातार, जहाज में जो कुछ था उसी को थोड़ा-बहुत खा-खाकर हम जिन्दा रहे। इस बीच जहाज हवा के साथ बराबर चलता रहा। आरम्भ के चार दिन तो हम दक्षिण-पूर्व और दक्षिण की ओर चलते रहे। इस बीच न्यू हालैण्ड का तट अवश्य निकल गया होगा। पांचवें दिन ठंडक बहुत बढ़ गई। हवा अब ज़रा और उत्तर की चलने लगी थी। सूरज निकला, परन्तु बिलकुल पीला था। वह थोड़ा-सा ही ऊपर चढ़ा। उसकी रोशनी न होने के बराबर ही थी। बादल तो नहीं दीख रहे थे, परन्तु हवा का ज़ोर बढ़ता ही जा रहा था। अनुमानतः दोपहर को, फिर हमारा ध्यान सूरज की तरफ गया। रोशनी अब भी कोई खास नहीं थी, लेकिन थोड़ी-सी चमक ज़रूर थी। ऐसा लगता था कि सूरज में किरणें हैं ही नहीं। वह चांदी की मैली थाली की तरह समुद्र की असीम गहराइयों में डूबा जा रहा था।

हम व्यर्थ ही छठे दिन के आगमन की प्रतीक्षा करते रहे। अभी तक छठा दिन मेरे लिए तो आया नहीं है—और उस स्वीडिश वृद्ध के लिए तो कभी नहीं आया। उस समय से अभी तक घोर अन्धकार छाया हुआ है। हम जहाज से बीस कदम की दूरी की चीज़ भी नहीं देख पा रहे हैं। समुद्र की चमक के अलावा जिसके इस प्रदेश में हम अभ्यस्त हो गए हैं, चारों तरफ घटाटोप अन्धेरा छाया है। तूफान

जारी है, परन्तु लहरें फेनिल नहीं हैं। हमारे चारों तरफ अवसाद का साम्राज्य है। गहरा विषाद छाया है। वृद्ध को तो बुरी तरह भय समा गया है। मैं स्वयं आश्चर्यमग्न हूं। हमने जहाज़ की चिन्ता छोड़ दी है क्योंकि उससे कोई लाभ नहीं है। हम मस्तूल वाला डंडा पकड़कर बैठे हैं। वक्त जानने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। हम कहां हैं, यह भी नहीं मालूम। हमें तो केवल इतना ज्ञात है कि हम दक्षिण की ओर बहुत अधिक आगे बढ़ आए हैं। इतनी दूर पहले कोई जहाज़ नहीं आया। हमें आश्चर्य है कि अभी तक हमें बर्फ-खण्ड क्यों नहीं मिले। इस बीच हमें प्रत्येक क्षण अंतिम क्षण प्रतीत होता है। हर पहाड़ जैसी ऊंची लहर, ऐसा लगता है हमें डुबा देगी। जो लहरें आ रही थीं उनकी मैंने कल्पना भी नहीं की थी। मुझे यही आश्चर्य था कि हम तुरन्त ही क्यों नहीं डूब जाते। मेरे साथी ने मुझे बतलाया कि जहाज़ पर लदा माल बहुत हलका है। इसके अलावा उसने मुझे जहाज के अन्य कई गुण भी बतलाए। परन्तु मैं निराश हो गया था। मैंने अपने आपको मरने के लिए तैयार कर लिया था, क्योंकि ज्यों-ज्यों जहाज़ आगे बढ़ता जाता था समुद्र का कालापन अधिकाधिक बढ़ता जाता था। मैं समझ गया था कि अब मेरा जीवन एक घंटे से अधिक का नहीं था। कभी तो लहरों पर हम इतना अधिक ऊपर उठ जाते थे कि हमें सांस लेना कठिन हो जाता था और कभी इतनी तेज़ी से नीचे जाते थे कि लगता था हम किसी ऐसे कुएं में घुसे चले जा रहे हैं जिनकी हवा तक में सड़ांध आ गई है। नीचे जाते हुए चक्कर आने लगता था।

एक बार हम इसी प्रकार जब नीचे गिरे जा रहे थे तो रात्रि के मौन को भंग करती हुई मेरे साथी के चिल्लाने की आवाज़ मेरे कानों में पड़ी। उसने कहा, "देखिए! देखिए!! ईश्वर! साक्षात् ईश्वर!!" जैसे ही मेरे साथी ने बोलना शुरू किया कि मुझे उस स्थान पर मटमैली-सी लाल रंग की रोशनी पड़ती दिखाई दी जहां हम लेटे थे। डेक पर वह रोशनी खूब चमक रही थी। मैंने अपनी आंख ऊपर

उठाई। जो दृश्य मैंने देखा उसे देख मेरा रक्त जम गया। हमसे ठीक ऊपर, काफी ऊंचाई पर, एक जहाज़ था। वह उस लहर के साथ नीचे आने ही वाला था जो उसे ऊपर ले गई थी। वह जहाज़ कोई चार हज़ार टन का था। जहाज़ से लहर कोई सौ गुनी बड़ी थी और जहाज़ लहर के उच्चतम बिन्दु पर था। परन्तु उस जहाज़ का आकार-प्रकार इतना बड़ा था कि मुझे ख्याल नहीं पड़ता था कि उतना बड़ा जहाज़ ईस्ट इण्डिया या अन्य किसी कम्पनी के पास था। जहाज़ का नीचे का भाग गहरा काला था; उसपर किसी प्रकार की बेल आदि नहीं बनी थी, जैसी अन्य जहाज़ों पर बनी होती है। जहाज़ के निचले हिस्से में जो छेद थे, उनमें पीतल की तोपें लगी थीं। जहाज़ पर वे लालटेनें भी टंगी थीं जो लड़ाई के वक्त टांगी जाती हैं। लालटेनें बुरी तरह हिल रही थीं। हमें जो सबसे अजीब बात लग रही थी, वह यह थी कि वह जहाज़ भी पाल से चल रहा था। वह भी अस्वाभाविक सागर में अनियंत्रित तूफान के चंगुल में था। हमें सबसे पहले उसका बगल का धनुषाकार हिस्सा दिखलाई दिया। वह उस समय लहर की गहराई से ऊपर आ रहा था। एक क्षण तक हम लहर के सबसे ऊंचे हिस्से में पहुंचे। जहाज़ को भयपूर्वक देखते रहे। पल भर वह वहां रहा। ऐसा लगा कि वह अपनी ऊंचाई पर विचार-सा करता रहा। इसके बाद कांपा और फिर नीचे आ गया।

अब से, पता नहीं क्यों, मुझे लगा कि मैं बिलकुल स्वस्थ हो गया हूं। जितना आगे मैं बढ़ सकता था उतना बढ़ गया। मैं अब उस बरबादी का निर्भय हो सामना करने के लिए तैयार था, जो होने वाली थी। हमारे अपने जहाज़ ने अब लहरों से संघर्ष करना बन्द कर दिया था और वह अपने सिर के बल समुद्र के गर्भ में समा जाने की तैयारी कर रहा था। नीचे आने वाली लहरें डूबते जहाज़ को और धक्का दे रही थीं। एक बड़ी लहर से एक बार इतने जोर का धक्का लगा कि मैं अपने जहाज़ से उछल बड़े जहाज़ पर गिर पड़ा।

मैं जब गिरा तो नाचती हुई लहरों पर जहाज कुछ देर के लिए स्थिर था, परन्तु शीघ्र ही जहाज़ चक्कर काटने लगा और इससे जो गड़बड़ी मची उसमें नाविकों ने मुझे गिरता नहीं देखा। मैं मुख्य रास्ते से चलकर एक स्थान पर छिप गया। मैंने ऐसा क्यों किया, यह नहीं कह सकता। नाविकों की शक्लें देख जो मुझे डर पैदा हो गया था, शायद मेरे छिपने का यही मुख्य कारण था। मैं अपने आपको ऐसे लोगों के हवाले नहीं करना चाहता था, जिनको देखने मात्र से ही मन में इतना संदेह, इतना भय, इतना अंदेशा हो जाए। इसलिए मैंने छिप जाना ही उचित समझा। मैंने जहाज़ के कुछ तख्ते हटाकर उनके नीचे अपने आपको छिपा लिया था।

मैं अभी बैठ भी नहीं पाया था, कि मुझे अपने ऊपर वह तख्ता फिर लगा लेना पड़ा। मैंने एक आदमी के आने की आहट सुनी। वह आदमी डगमगाते कदमों से निकल गया। मैं उसका चेहरा नहीं देख पाया था, परन्तु सामान्यतया उसका हुलिया देख लिया था। उससे पता लगता था कि वह वृद्ध है। उसने बुदबुदाते हुए कुछ कहा। जो शब्द उसके होंठों से निकले उनको मैं समझ न सका क्योंकि मैं वह भाषा नहीं जानता था। वह एक कोने में गया जहां अजीब से उपकरण तथा पुराने ढंग के नक्शे थे। उसकी चालढाल में बालक जैसी चंचलता और देवतुल्य गरिमा का विचित्र सम्मिश्रण था। अन्त में वह डेक पर चला गया। इसके बाद मैंने उसे नहीं देखा।

मेरे हृदय में एक ऐसी भावना उभर रही है, जिसका मैं विश्लेषण नहीं कर सकता। न तो वह पहले कभी उठी और न शायद आगे ही कभी किसी के हृदय में होगी। बाद में जो ख्याल मेरे दिमाग में आया, वह ठीक है या नहीं, नहीं कह सकता। मैं अपने विचारों से कभी सन्तुष्ट नहीं होता। परन्तु क्या वह विस्मय की बात नहीं है कि वे भावनाएं या विचार अनिश्चित हैं क्योंकि जिन मूल सूत्रों से वे उत्पन्न हुए हैं, वे सूत्र स्वयं सर्वथा नवीन हैं। मुझमें एक नए भाव का जन्म हुआ है—एक नया विचार मुझमें आया है।

इस विपत्तिग्रस्त जहाज़ पर आए मुझे काफी समय हो गया है। मुझे अपने भाग्य की लकीरें भी अब पहले से अधिक स्पष्ट दिखलाई पड़ने लगी हैं। ये सब कैसे आदमी हैं, मेरी समझ में नहीं आता। सबके सब न जाने किन विचारों में डूबे हैं। ये मेरे पास से गुज़र जाते हैं और इन्हें मेरी उपस्थिति का आभास तक नहीं होता। मेरा छिपना बिलकुल व्यर्थ है, क्योंकि ये मुझे देख ही नहीं सकेंगे। अभी कुछ ही देर पहले मैं जहाज़ के मेट के सामने से गुज़रा, इसके बाद मैं कप्तान के निजी कैबिन में घुस गया। उसके सामने से मैंने लिखने के लिए कागज़-कलम उठाया, लेकिन उसे कुछ भी पता न चला। उसी कागज़-कलम-दवात से मैंने यह सब लिखा है और लिख रहा हूं। मैं अपनी यह कथा समय-समय पर लिखता रहूंगा। यह सत्य है कि मैं सारी बातें दुनिया को न बता सकूंगा। परन्तु फिर भी मैं प्रयत्न अवश्य करूंगा। सब कुछ समाप्त होने के पूर्व मैं यह पाण्डुलिपि एक बोतल में भर समुद्र में विसर्जित कर दूंगा।

अभी-अभी एक ऐसी घटना हुई है, जिसने मुझे बड़े विचार में डाल दिया है। क्या यह सब संयोग का ही परिणाम है? मैं डेक पर आ गया हूं और पुराने पाल तथा कपड़ों के ढेर पर आकर लुढ़क गया हूं। अपने भाग्य की विलक्षणता पर विचार करते-करते मैंने अनायास ही कोलतार ब्रुश उठा लिया। इस ब्रुश को डुबोकर एक बड़े पीपे पर रखे पाल के किनारे को उससे पोतना शुरू कर दिया। यह पाल फैल गया है और मेरा लिखा कोलतार का शब्द 'खोज' बन कर फहरा उठा है।

इधर मैंने जहाज़ का आकार-प्रकार और साज-सज्जा पर ध्यान देना शुरू किया है। तोपें आदि तो इस जहाज़ पर अवश्य लगी हैं किन्तु वह युद्धपोत नहीं है। उसकी शक्ल, उसके सामान्य उपकरण, उसकी बनावट, यह सब कुछ युद्धपोत जैसा नहीं है। मैं यह तो कह सकता हूं कि जहाज़ क्या नहीं है, लेकिन वह क्या है, यह बताना असंभव है। उसका अजब आकार-प्रकार, अनोखी लोहे की छड़ें,

उसकी विशालता, उसका बिलकुल धनुष जैसा मुड़ा बगल का भाग, उसका पुराने ढंग का अग्रभाग, इन सबको देख मुझे याद पड़ता है कि मैं इन सबसे परिचित हूं। मस्तिष्क पर इस सबकी अस्पष्ट, धुंधली-सी छाया पड़ती है। पुराने इतिहास की ओर स्मरणातीत काल की बातें याद आने लगती हैं···। यह सब कैसे हो रहा है, नहीं बता सकता।

मैं जहाज की लकड़ी देख रहा हूं। लकड़ी पहचानने में मैं असमर्थ रहा हूं। लकड़ी में कुछ ऐसी विशेषता है जिसे देखकर मुझे प्रतीत होता है कि जिस काम में वह लाई गई है, उसके उपयुक्त नहीं है। वह दीमक द्वारा चाटी गई नहीं मालूम होती। सागर में बहुत दिनों तक रहने के कारण सड़ी भी नहीं लगती। फिर भी उसमें बहुत-से छिद्र हैं। यद्यपि मेरा पर्यवेक्षण आवश्यकता से अधिक जिज्ञासु प्रतीत हो सकता है लेकिन यह स्पेन में पैदा होने वाले शाह बलूत के पेड़ की लकड़ी का गुण हो सकता है, विशेष रूप से यदि लकड़ी कृत्रिम ढंग से फुलाई गई हो।

उक्त वाक्य को दुहराने पर मुझे एक पुराने और अनुभवी डच नाविक की बात याद आ रही है। वह कहा करता था, "यह बात उतनी ही सत्य है जितना एक समुद्र जिसमें कि जहाज नाविक के शरीर की तरह बढ़ा करता है।"

कोई एक घंटा पूर्व, मैं नाविकों के समूह के बीच बिना बात घुस पड़ा। उन्होंने मेरी तरफ कोई ध्यान नहीं दिया। मैं उनके बीच खड़ा था। परन्तु उन्हें मेरी उपस्थिति का कोई आभास तक न हुआ। जैसा एक नाविक मैंने पहले देखा था, ये भी उसकी ही तरह पुराने जमाने के लोग लगते थे। वृद्धावस्था के कारण वे क्षीण लग रहे थे, उनके पैर कांपते थे, उनके कंधे झुके थे, उनकी त्वचा इतनी ढीली हो गई थी कि वह हवा के स्पर्श मात्र से ही कंपित हो जाती थी। वे बहुत धीरे-धीरे बोलते थे, आवाज में कुछ कंपकंपी थी। बीच में वह टूट जाती थी। उनकी आंखों से उनकी आयु की अधिकता का

भान होता था। उनके चारों तरफ गणित के उपकरण पड़े थे। यह सब बहुत ही पुराने थे और अब वैसे उपकरण नहीं बनते हैं।

मैं बता चुका हूं, मुख्य पाल झुक गया था। उस समय से वह जहाज हवा के साथ बराबर दक्षिण की ओर बढ़ा जा रहा है। जहाज के सारे पाल खुले हैं। उनमें हवा भरी है। इस भयंकर सागर में जहाज पूरी गति से दक्षिण को उड़ा जा रहा है। मैं अभी डेक से चला आया क्योंकि वहां पर खड़ा रहना तक मुश्किल है। परन्तु नाविकों को वहां खड़े रहने में, अपने अनुभव के कारण कोई दिक्कत नहीं हो रही। मुझे बड़ा आश्चर्य हो रहा है कि हमारा यह जहाज इतना भारी है, फिर भी वह डूब क्यों नहीं रहा। हम गर्त से बिना छलांग लगाए, शाश्वतता के कूप के किनारे बराबर घूमते ही रहेंगे। लहरें पहले की अपेक्षा हजार गुनी बड़ी और शक्तिशाली हैं, लेकिन हम मछलियों की तरह तैरते चले जा रहे हैं। पीछे से काले समुद्र का जल ऊपर की तरफ राक्षस की भांति उठता है। ऐसा लगता है कि उन राक्षसों को नाश करने की आज्ञा नहीं है, वे केवल डरा सकते हैं। मैं अपने बचने का एक ही स्वाभाविक कारण बतला सकता हूं। मैं समझता हूं जहाज किसी बहुत ही सशक्त धारा में फंसा है जो उसे डूबने नहीं दे रही।

मैंने कप्तान को उसके कैबिन से बिलकुल उसके सामने खड़े होकर देखा। परन्तु जैसी मैंने कल्पना की थी, उसने मेरी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। यदि कोई सरसरी तौर पर देखे तो कप्तान में उसे साधारण मनुष्य से कम या अधिक कोई बात नहीं दिखलाई देगी। परन्तु उसे ध्यान से देखने पर मेरे हृदय में भय और आश्चर्य मिश्रित श्रद्धा उमड़ आई। लम्बाई में वह लगभग मेरे बराबर है, अर्थात् पांच फीट आठ इंच लम्बा। बदन बड़ा गठीला और सुडौल है। चेहरा बहुत रोबदार नहीं है। अन्य कोई उल्लेखनीय बात नहीं दिखलाई देती। परन्तु मुंह पर जो भाव है, वह बड़ा अनूठा है। उसमें गम्भीरता है, आश्चर्य है, और अनुभव की ऐसी मुद्रा अंकित है, कि

सहसा सिर झुक जाता है। माथे पर झुर्रियां हैं। परन्तु आयु की अधिकता स्पष्ट दिखलाई पड़ती है। उसके सफेद बाल अनुभव बताते हैं और सफेद आंखों से भविष्य की स्पष्ट झलक मिलती है। केबिन के फर्श पर लोहे के अजीब कुन्दे-से बिखरे पड़े हैं, गणित विज्ञान के उपकरण पड़े हैं और पुराने ज़माने के भूले-बिखरे नक्शे पड़े हैं। उसका सिर अपने हाथों पर झुका था। वह जलती, बेचैन निगाह से एक कागज़ देख रहा था। यह शाही आज्ञापत्र-सा लग रहा था और उस-पर बादशाह के हस्ताक्षर भी थे। उसने किसी अज्ञात भाषा में कुछ शब्द कहे, ठीक उसी तरह जिस तरह मैंने छिपे-छिपे एक नाविक को पहले बुदबुदाते सुना था। आवाज़ बड़ी धीमी थी। यद्यपि मैं कप्तान की कोहनी के पास खड़ा था लेकिन मुझे लगा कि आवाज़ एक मील दूर से आ रही है।

जहाज़ और उसकी हर वस्तु पर युगानुयुगों की मुद्रा अंकित है। नाविक शताब्दियों पूर्व दफनाए गए मुर्दों की भांति इधर से उधर दौड़ रहे हैं। उनकी आंखों से चिन्ता और बेचैनी झलकती है। समर प्रांगण की लालटेनों के प्रकाश में कभी-कभी उनकी अंगुलियां चमक पड़ती हैं। इससे मेरे हृदय में बड़ी अजीब-सी भावनाएं उत्पन्न हो जाती हैं। मैंने जीवन भर पुराने ज़माने की चीज़ें बेचने का काम किया है। बालबेक, टाडमोर, पर्सपोलिस आदि खंडहरों की छाया मेरे ऊपर इतनी पड़ी है कि मेरी आत्मा स्वयं खंडहर हो गई है।

जब मैं अपने चारों तरफ देखता हूं तो मुझे जो भय पहले लगा था, उसका स्मरण कर लज्जा आती है। यदि मैं तूफान का शोर सुनकर कांप उठता हूं, जो अभी जारी है, तो क्या सागर और वायु के युद्ध को देख, जिसका वर्णन शब्दों के चक्रवात और तूफान से किया जाना असंभव है, मेरी आंखें खुली की खुली नहीं रह जाएंगी? जहाज़ के चारों ओर अंधेरा ही अंधेरा है। पानी चढ़-उतर ज़रूर रहा है लेकिन उसमें फेन नहीं है। परन्तु इधर-उधर, अगल-बगल, हिम-खण्ड अस्पष्ट रूप से अवश्य दिखलाई पड़ जाते है। वे काफी ऊंचे-ऊंचे हैं और वे

विश्व की भीत-से प्रतीत होते हैं।

जैसा मैंने सोचा था, जहाज़ किसी तेज़ धार के अंक में था और यद्यपि लहरें ज़ोरों का निनाद करती हुई हिम-खंडों से लड़ रही थीं, तथापि जहाज़ निरन्तर दक्षिण, धुर दक्षिण की तरफ बहा चला जा रहा था।

मैं अपनी आतंकित दशा का वर्णन नहीं कर सकता। परन्तु इन क्षेत्रों का रहस्य जानने की जिज्ञासा इस समय भी, इस निराश अव-स्था में भी पीछा नहीं छोड़ रही। इसके लिए मैं भयानक से भयानक ढंग की मौत अंगीकार करने को प्रस्तुत हूं। यह तो स्पष्ट ही है कि हम किसी ऐसे गुप्त रहस्य को जानने जा रहे हैं, जिसका ज्ञान हो जाना ही विनाश है। शायद यह जलधार हमको दक्षिणी ध्रुव ले जा रही हो। यह मानने को बाध्य होना पड़ रहा है क्योंकि इस प्रकार की कल्पना तथ्यों के सर्वथा अनुकूल ही है।

नाविक कम्पित और अविश्रान्त चरणों से डेक पर इधर से उधर घूम रहे हैं, लेकिन इनके चेहरे पर निराशा की तटस्थता के बजाय आशा की बेचैनी है।

इस बीच हमारे पालों में अब भी हवा भरी है। जिस प्रकार कभी हम पाल उठा लेते हैं, ठीक उसी प्रकार पालों में भरी हवा समूचे जहाज़ को उठा लेती है।

हे भगवान्! अकस्मात् दाहिने हाथ की ओर विशाल हिम-खंड आ गया, बाईं तरफ भी। हम बीच में तेज़ी से एक ही जगह पर घूमते जा रहे हैं। जहाज़ इतनी तेज़ी से घूम रहा है कि हमें चक्कर आ रहा है। ऐसा लगता है कि अर्ध चन्द्राकार नाट्यशाला है जिसकी दीवारें दूरी और अंधेरे के कारण हमें दिखलाई नहीं पड़ रही।

परन्तु अब अपने भाग्य पर विचार करने का अवसर मुझे नहीं मिलेगा। जहाज़ के वृत्त निरन्तर लघु से लघुतर होते जा रहे हैं—हम भंवर के चंगुल में फंस गए हैं—यह भंवर गरजते, लहराते बिजली और तूफानी समुद्र के बीच है।

*जहाज कांप रहा है—हे भगवान्! और—पानी में गर्क हुआ जा रहा है।

१. यह कहानी सन् १८३१ में प्रकाशित हुई थी। इसके कई वर्ष बाद मुझे मर्केटर के नक्शे देखने को मिले। इनमें (उत्तरी) ध्रुव की खाड़ी में चारों तरफ से दौड़ता समुद्र दिखलाया गया है जो पृथ्वी के गर्भ में जाकर लुप्त हो जाता है। ध्रुव को काली और ऊंची चट्टान दिखलाया गया है।

३ | कूप और काल

मैं व्यक्ति था। उस लम्बी यंत्रणा से करीब-करीब मर ही गया था। अन्ततः जब उन्होंने मुझे बंधनमुक्त कर दिया और मुझे उठकर बैठने की अनुमति मिल गई तो मुझे प्रतीत हुआ कि मैं अचेत हुआ जा रहा हूं। दंड—मृत्युदंड, यही अंतिम स्पष्ट शब्द था, जो मैंने सुना था। इसके बाद न्यायाधीशों के होंठों से निकले शब्द मुझे स्वप्न की अस्पष्ट बुदबुदाहट-से लगे। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ, कोई चीज़ बड़ी तेज़ी से घूम रही है। इसकी तुलना चलती चक्की की आवाज़ से की जा सकती है। लेकिन ऐसा कुछ ही देर के लिए हुआ। फिर कुछ नहीं सुनाई पड़ा। वह दृश्य कितना भयंकर था, भले ही कुछ देर के ही लिए था तो क्या! मैंने काली पोशाकें पहने न्यायाधीशों के होंठों को देखा था। उनके होंठ सफेद थे, बिलकुल सफेद, इस कागज से भी अधिक जिसपर मैं यह लिख रहा हूं। वे पतले थे; इतने पतले कि देखते ही डर लग जाए। उनमें कठोर दृढ़ता का पैनापन था, दृढ़ निश्चय था और मानवीय व्यथा के प्रति (घोर) अवहेलना का भाव था। मैंने देखा, उन्हीं होंठों से आदेश पढ़ा जा रहा था—वही आदेश जो मेरे भाग्य का निर्णायक था। उनके पढ़ने में गजब की वक्तृत्व-शैली थी। मैंने उनके होंठों से अपना नाम निकलते देखा था। मैं डरकर कांपने लगा था, क्योंकि मुझ तक कोई आवाज़ नहीं पहुंच रही थी। मैंने कुछ क्षणों के लिए उन पर्दों की कोमल फरफराहट तथा उनमें पड़ने वाली हलकी-सी लहरों को भी सुना और देखा था जो उस कमरे में टंगे थे। लेकिन मुझे उन्हें देखकर भी डर लगा। ऐसा डर कि कहीं मैं उस डर की याद से अपना आपा न खो बैठूं। इसके बाद मेरी आंख सात बड़ी-बड़ी मोमबत्तियों पर जाकर टिक गई। पहले

तो मुझे उनमें बड़ी दयालुता-सी लगी। ऐसा लगा कि वे मोमबत्तियां नहीं बल्कि सात लम्बे और छरहरे देवदूत हैं, और वे मुझे बचा लेंगे। लेकिन तभी मैंने अनुभव किया कि मेरा जी बुरी तरह घबरा रहा है, मेरा रोम-रोम कांप रहा है, ठीक उसी तरह जैसे किसी ने बिजली दौड़ा दी हो। इस बीच देवदूतों वाला दृश्य लुप्त हो गया और अब मुझे केवल मोमबत्तियों की ज्वाला शिखा ही दिखलाई पड़ रही थी। मैंने यह भी समझ लिया कि इनसे मुझे कोई सहायता नहीं मिलेगी। तभी मेरे मस्तिष्क में अति मधुर गीत की भांति यह विचार आया कि दफन होने के बाद कब्र में कितना सुख मिलेगा। यह विचार मस्तिष्क में बहुत हौले-हौले और चोरी से आया। मैंने जब उसका पूरा बल अनुभव किया, उस समय उस विचार को मस्तिष्क में आए काफी समय बीत चुका था। मेरी इस अनुभूति के बाद न्यायाधीशों की शक्लें उसी तरह गायब हो गईं, जिस तरह जादू के ज़ोर से कोई गायब हो जाता है। लम्बी-लम्बी मोमबत्तियां भी अदृश्य हो गईं, चारों तरफ घोर अंधकार छा गया। ऐसा लग रहा था कि मैं बहुत तेज़ी से पाताल में नीचे की तरफ गिरा जा रहा हूं और मेरी समस्त अनुभूति-शक्ति उस गति में डूब गई है—समाप्त हो गई है। और उसके बाद मौन, निस्पन्दता और अंधकार का संसार था।

मैं अचेत हो गया था, फिर भी मन नहीं मानता कि सारी चेतना लुप्त हो गई थी। चेतना का कौन-सा अंश लुप्त नहीं हुआ, न तो मैं उसकी परिभाषा ही करूंगा और न उसके बारे में विस्तारपूर्वक ही बतलाऊंगा, लेकिन इतना अवश्य कहूंगा कि समस्त चेतना लुप्त नहीं हुई थी। समस्त चेतना क्या गहरी नींद में लुप्त हो जाती है? नहीं। क्या विक्षिप्तावस्था में? नहीं। क्या बेहोश हो जाने पर? नहीं। क्या मर जाने पर? नहीं। दफनाए जाने के बाद कब्र में भी पूर्ण चेतना लुप्त नहीं होती। यदि ऐसा न हो तो मनुष्य के लिए अनश्वरता जैसी कोई वस्तु ही न रह जाए। गहरी से गहरी नींद भी जब टूटती है, तो आप किसी स्वप्न-जाल को ही तोड़कर जागते हैं। यह स्वप्न-

जाल इतना क्षीण होता है, कि उठने के कुछ ही देर बाद उस विषय में हम सब कुछ भूल जाते हैं। अचेत हो जाने के बाद जब होश आता है तो हम दो अवस्थाओं से गुजरते हैं। पहली दशा में हमारा मस्तिष्क चैतन्य होता है और इसके बाद दूसरी दशा में हमें भौतिक अस्तित्व का बोध होता है। जब हमें अपने भौतिक अस्तित्व का ज्ञान हो जाता है तब हम यदि पहली दशा पर विचार करें तो हमें अपने मानस-पटल पर बहुत-सी स्मृतियां अंकित मिलेंगी। उनमें से बहुत-सी स्मृतियां तो अति सुदूर अतीत की होंगी। और सुदूर अतीत की स्मृतियां क्या हैं? दूरी क्या है? हम मकबरे और उसकी छाया—उन दोनों के बीच किस प्रकार अंतर स्थापित करें? होश में आने की जिन दो अवस्थाओं की चर्चा मैंने की है, यदि उनमें से प्रथम अवस्था की अनुभूतियों का हम स्मरण करें और चेतन मस्तिष्क का उपयोग करें तो वे हमें सहसा याद नहीं आतीं। परन्तु फिर क्या? और क्या हम कभी-कभी इस बात पर आश्चर्य नहीं करते कि वह कभी-कभी हमें किस प्रकार अनायास याद आती चली आ रही है? जो व्यक्ति कभी अचेत नहीं हुआ हो, उसे जलते कोयलों में महलों या अजीब-अजीब परिचित अथवा अपरिचित शक्लें नहीं दिखाई पड़तीं, उसे वायुमण्डल में वे दुःखद दृश्य भी नहीं दिखलाई पड़ते, जो कुछ व्यक्तियों को दिखलाई पड़ते हैं। वह व्यक्ति किसी बढ़िया फूल की सुगंधि पर भी विचार नहीं करता, ऐसा व्यक्ति किसी मधुर संगीत की ऐसी स्वर-लहरी को सुनकर मस्त भी नहीं होता, जिसे उसने पहले कभी न सुना हो।

अचेतनावस्था में मुझे क्या अनुभूतियां हुई हैं, उनको याद करने की मैंने कई बार कोशिश की है, और इस मानसिक संघर्ष के फलस्वरूप मुझे कुछ सफलता भी मिली है। मुझे कुछ देर के लिए, बहुत ही थोड़ी देर के लिए, ऐसा प्रतीत हुआ है कि वह अनुभूति मुझे बेहोशी की दशा में ही हुई थी। स्मृतियों की इन छायाओं से ही मुझे ज्ञान हुआ कि कुछ लम्बी-लम्बी मूर्तियां मुझे नीचे, पाताल की ओर घसीटे

लिए जा रही हैं। यह अनुभूति उस समय तक होती रही है, जब तक असीम गहराई में गिरते जाने के कारण मुझे चक्कर नहीं आने लगे। हृदय की गति की अस्वाभाविक स्पन्दनहीनता के कारण एक प्रकार के भयानक आतंक ने डेरा जमा लिया था, यह भी उन्हीं अनुभूतियों का प्रतिबिम्ब बतलाता है। और इसके बाद सहसा ऐसा प्रतीत हुआ कि हर वस्तु गतिहीन-निस्पन्द हो गई है। ऐसा लगा कि जो लोग मुझे नीचे घसीटे लिए जा रहे थे, वे क्लान्त हो रुक गए हैं। वे असीम गहराई की सीमा पर पहुंच गए हैं। मैं भीग गया था, शायद नमी की वजह से। विचार-शक्ति लुप्त हो गई थी। इसके बाद मात्र विक्षिप्तता की स्मृति ही रह जाती है। यह विक्षिप्तता निषिद्ध बातों की ही ओर बैठती है।

इसके बाद अकस्मात् हृदय स्पन्दित हो उठता है। हृदय के स्पन्दन का शोर मेरे कानों में पड़ता है। थोड़ी देर के लिए वह रुक जाता है और सब कुछ पुनः शून्य हो जाता है। इसके बाद पुनः स्पन्दन की ध्वनि आती है, और ऐसा लगता है, सारा शरीर झनझना उठा है। तब फिर अपने भौतिक अस्तित्व का भान होता है; लेकिन सोच नहीं सकता। ये अवस्था काफी देर तक चलती है। सहसा विचार-शक्ति तक लौट आती है। बड़ा भय लगता है, और मैं अपनी वास्तविक स्थिति जानने की पूरी चेष्टा करता हूं। तब एक साथ मस्तिष्क, चेतना-शक्ति कार्य आरम्भ कर देते हैं और मैं उठने की चेष्टा करता हूं। मुझे मुकदमे की, न्यायाधीशों की, पर्दों की, दण्ड की, अपनी व्यथा की और अपनी अचेतन दशा की, सबकी याद आ जाती है। मैं यह सब कुछ भूल जाता हूं। जो कुछ बेहोशी में मेरे ऊपर गुजरा है, उस समस्त अनुभव के बारे में एक दिन बाद जब बहुत प्रयत्न किया, तब उक्त बातें याद आईं।

अभी तक मैंने अपनी आंख नहीं खोली हैं। मुझे अनुभव हो रहा है कि मैं पीठ के बल लेटा हूं; बंधा नहीं हूं। मैंने हाथ इधर-उधर फेरा तो लगा कि जहां मैं पड़ा हूं, वह स्थान सचमुच नम है और कठोर

भी। मैं कुछ मिनटों तक पड़ा-पड़ा वहां यही सोचता रहा कि मैं कौन हूं, कहां हूं और क्या हूं या हो सकता हूं। मैं चाहता तो बहुत था कि आंखें खोलूं लेकिन आंख खोलकर देखने का साहस बिलकुल नहीं था। मैं अपने चारों ओर की वस्तुओं पर दृष्टिपात करने से भयभीत था। यह नहीं कि मुझे भयावह वस्तुओं को देखने से डर लग रहा था, अपितु मैं इसलिए परेशान था कि जहां मैं पड़ा हूं वहां, संभवतया मेरे देखने के लिए कुछ भी न हो। अन्त में, बहुत परेशान होकर, मैंने एकदम आंखें खोल ही दीं। मैंने जो भयावह कल्पना की थी, वह सत्य हो गई। शाश्वत रात्रि का अंधकार मुझे घेरे था। मुझे सांस लेने तक में कष्ट हो रहा था। अंधकार की गहनता ने मुझे दबा रखा था; और मेरा दम घुटा-सा जा रहा था। आसपास का वातावरण बड़ा घना और बंद था। वह असह लग रहा था। मैं चुपचाप पड़ा रहा और अपनी बुद्धि से सोचने की कोशिश करने लगा। मैंने सबसे पहले न्यायालय की कार्रवाइयों का स्मरण किया और उसके बाद अपनी वास्तविक दशा का अनुमान लगाने की चेष्टा की। दण्ड दिया जा चुका था और मुझे लगा कि तब से अब तक बहुत समय गुजर गया है। फिर भी मैं एक क्षण के लिए भी यह न सोच सका कि मैं मर चुका हूं। कहानियों की बात छोड़ दीजिए। इस प्रकार की कल्पना यथार्थ अस्तित्व में बिलकुल अप्रासंगिक है—लेकिन मैं कहां हूं और किस अवस्था में हूं? मैं जानता था, मृत्युदण्ड प्राप्त लोगों को किस स्थान पर मौत के हवाले किया जाता था। जिस दिन मेरी न्यायालय में पेशी हुई थी, उसी रात एक आदमी को मृत्युदण्ड दिया गया था। क्या मुझे फिर तहखाने की काल-कोठरी में डाल दिया गया है? क्या वे तब तक मुझे उसमें डाले रखेंगे जब तक बलि देने का अगला अवसर नहीं आता? तत्काल ही मुझे ख्याल आया कि ऐसा होना संभव नहीं है। इसके अलावा मेरी काल-कोठरी तथा टोल्डो की अन्य सभी काल-कोठरियों के फर्श पत्थर के थे और उनमें प्रकाश की थोड़ी बहुत व्यवस्था थी।

अकस्मात् मेरे दिमाग में एक भयानक विचार आया। इस विचार के आते ही मेरा खून हृदय की ओर ज़ोर-ज़ोर से उछलने लगा। कुछ देर के लिए मैं फिर अचेत हो गया। दूसरी बार होश आते ही मैं उठ खड़ा हुआ। मेरा अंग-अंग बुरी तरह कांप रहा था। मैंने अपने हाथ ऊपर उठा लिए और इसके बाद ज़ोरों से उन्हें अपने चारों तरफ घुमाना शुरू कर दिया। मुझे फिर भी कुछ पता नहीं चला। इतने पर भी मैं एक कदम आगे रखने से ही डर रहा था; कहीं कब्र की दीवारों से न टकरा जाऊं। मेरे रोम-रोम से पसीना निकल रहा था। माथे पर स्वेद की बड़ी-बड़ी बूंदें चुहचुहा आई थीं। अंततः असमंजस की व्यथा असह्य हो उठ । मैं बड़ी सावधानी से एक कदम आगे बढ़ा। मैंने अपने दोनों हाथ आगे फैला रखे थे। आंखें फाड़-फाड़कर देख रहा था, कहीं से शायद प्रकाश की छोटी-सी किरण दीख जाए। ऐसा लग रहा था कि आंखें बाहर निकल-निकल पड़ेंगी। उसी प्रकार मैं कई कदम आगे बढ़ गया। अब भी अंधकार और शून्य के अतिरिक्त कुछ न था। सांस लेने में तकलीफ नहीं हो रही थी। वह मैं पहले की अपेक्षा आसानी से ले रहा था। ऐसा लग रहा था कि मेरे जीवन का वीभत्स रूप से अन्त नहीं हुआ था।

और अब, ज्यों-ज्यों मैं कदम-कदम आगे बढ़ाता जा रहा था, त्यों-त्यों मेरे दिमाग में टोल्डो के सम्बन्ध में प्रचलित हज़ारों भयंकर जन-श्रुतियां आ रही थीं। काल-कोठरियों के सम्बन्ध में बहुत-सी कहानियां थीं—बड़ी विचित्र और वीभत्स। इन्हें फुसफुसाहट के अतिरिक्त और किसी प्रकार दोहराया भी नहीं जा सकता। क्या मुझे इस तहखाने की काल-कोठरी में भूखा मर जाने के लिए छोड़ दिया गया है। या पता नहीं, शायद इससे भी भयंकर अन्त मेरे भाग्य में बदा है? मैं अपने न्यायाधीशों को जानता था, इसलिए मुझे उनके बारे में कोई संदेह नहीं था। मुझे मृत्युदण्ड शायद अन्य अपराधियों से अधिक कठोर ढंग से दिया जाएगा, यह मैं जानता था। कब और कैसे मरूंगा—यही बात सोच रहा था।

अन्ततोगत्वा मेरे हाथ किसी कठोर वस्तु से जा टकराए। यह दीवार थी—पत्थर की, बड़ी चिकनी, पतली और अति शीतल। मैं उसके सहारे चलता रहा। लेकिन इन स्थानों के सम्बन्ध में जो कहानियां थीं, वे सब मेरे दिमाग में थीं अतः एक प्रकार का सन्देह निरन्तर घर किए रहा। सन्देह था, पता नहीं अगले ही कदम पर क्या हो! किन्तु इस प्रकार मुझे उस काल-कोठरी की लम्बाई-चौड़ाई के सम्बन्ध में फिर भी कोई ज्ञान नहीं हुआ। मैं जिस जगह से चला था, घूमकर उसी जगह कब पहुंच गया, इसका ज्ञान प्राप्त करने का कोई मार्ग नहीं था। दीवार एकदम समतल थी। मैंने अपनी जेब में पड़े चाकू को निकालने के लिए हाथ डाला। यह चाकू उस समय मेरी जेब में था जब मैं न्यायालय के कमरे में घुसा था। लेकिन अब वह उस स्थान पर नहीं था। मेरे कपड़े उतार लिए गए थे। उनके स्थान पर मोटे ऊनी कपड़े का लबादा पहना दिया गया था। मैंने सोचा था कि मैं चाकू को दीवार में दो पत्थरों के बीच के किसी जोड़ में घुसेड़ दूंगा और इस प्रकार घूमकर जब आऊंगा तो कोठरी की गोलाई की लम्बाई समय के अनुमान से ज्ञात हो जाएगी। लेकिन चाकू की अनुपस्थिति से जो कठिनाई हुई वह बड़ी गौण थी। मैंने अपने लबादे का कुछ हिस्सा फाड़ डाला और उसे लबादे में लगे कांटे सहित अटका दिया। पूरा चक्कर लगाने के बाद लबादे का यह टुकड़ा दुबारा मिलने में कठिनाई नहीं हुई। लेकिन ऐसा करते समय मैंने न तो इस बात पर विचार किया कि कोठरी की गोलाई कितनी लंबी होगी और न मैंने इस बात का ख्याल किया कि मैं कितना क्षीण हूं। ज़मीन रपटीली और नम थी। चलने से मैं ठोकर खाकर गिर गया। अति-क्लान्त हो जाने के कारण मैं निष्क्रिय होकर पड़ गया और पड़ते ही निद्रा आ गई।

जागने पर जब मैंने अपना हाथ इधर-उधर फैलाया तो मुझे पास ही रोटी और जल का पात्र रखा मिल गया। मुझमें इतनी शक्ति नहीं थी कि यह सोचूं कि वहां रोटी और पानी का घड़ा कैसे आ

गया। परन्तु मुझे भूख भी लगी थी और प्यास भी, इसलिए मैंने जी भर रोटी खाई और पानी पिया। इसके बाद मैंने दीवार के सहारे-सहारे चलना फिर शुरू किया और लबादे के कपड़े का वह टुकड़ा मुझे मिल गया। लेकिन इसमें मुझपर बड़ा ज़ोर पड़ा। जब मैं गिरा था तब तक बावन कदम चल चुका था। इसके बाद अड़तालीस कदम और चलने पड़े तब कहीं कपड़ा मुझे मिला। इस प्रकार सौ कदम हुए। दो कदम चलने पर यदि एक गज़ दूरी भी मैंने पूरी की हो तो उस काल-कोठरी का व्यास पचास गज़ हुआ। मुझे रास्ते में कई कोने मिले थे—इसलिए कोठरी को शक्ल के बारे में मैं कुछ भी अनुमान नहीं लगा सका।

इस खोज का कोई उद्देश्य नहीं था। और खैर मुझे आशा तो कुछ भी नहीं थी, लेकिन मुझे अज्ञात उत्सुकता थी जिसने मुझे यह सब कार्य करने पर विवश किया। दीवार की लम्बाई नापने के बाद मैंने चौड़ाई नापने की कोशिश की। पहले तो मैं बहुत ही सावधानी से चला, क्योंकि वैसे तो फर्श पत्थर का लगता था, किन्तु स्थान-स्थान पर वह पंकिल था और रपटकर गिर पड़ने की बड़ी आशंका थी। आखिर मैंने साहस बटोरा और दृढ़तापूर्वक कदम रखने में हिचकिचाहट नहीं दिखलाई। इस तरह मैंने फर्श को एक छोर से दूसरे छोर तक बिलकुल सीधी रेखा में पार करने का यत्न किया। इस प्रकार मैंने दस-बारह कदम रखे होंगे कि मेरा पैर फटे लबादे के नीचे के कोने से उलझ गया। मैंने उसपर पैर रख दिया और बड़े ज़ोरों से मुंह के बल गिर पड़ा।

गिरने से जो अव्यवस्था हो गई, उसमें मैंने एक चौंका देने वाली बात अनुभव नहीं की; किन्तु कुछ क्षण मैं बिलकुल हाथ-पैर बिना हिलाए-डुलाए पड़ा था। उस समय एक गड्ढे की ओर मेरा ध्यान आकृष्ट हुआ। बात यह थी कि मेरी ठोड़ी तो फर्श पर टिकी थी, लेकिन मेरे होंठ और मेरे सिर का ऊपरी भाग, जो प्रतीत हो रहा था कि ठोड़ी से नीचे की सतह पर है, किसी भी चीज़ से छू नहीं रहा

था। उसी समय मुझे ऐसा लगा कि मेरे माथे पर भपारा-सा लगा। मेरे नथनों में वनस्पति की गंध एकदम अन्दर प्रविष्ट कर गई। मैंने अपना हाथ आगे बढ़ाया। तभी मैंने अनुभव किया कि मैं एक गर्त के बिलकुल किनारे पर गिर गया हूं। यह गर्त गोल था। मैं यदि इसमें गिर जाता तो—इसकी कल्पना कर मैं भय से कांप गया। गर्त की क्या शक्ल थी—इसका पता लगाने का मेरे पास कोई साधन न था। गर्त के किनारे-किनारे हाथ फैलाए और स्पर्श करने से मेरे हाथ पत्थर का एक टुकड़ा पड़ गया। मैंने इस कंकड़ को अंध गर्त में फेंक दिया। कई क्षणों तक कंकड़ के नीचे जाने की ध्वनि मैं सुनता रहा, और फिर मैंने सुना कि वह कंकड़ छपाक् से जाकर पानी में गिर गया। गिरने की ध्वनि से ज़ोरों की प्रतिध्वनियां हुईं। तभी मेरे सिर पर दरवाज़ा खुलने जैसी आवाज़ हुई और हलकी-सी रोशनी आई। लेकिन रोशनी जिस प्रकार सहसा आई थी उसी प्रकार गायब भी हो गई।

मैं समझ गया कि मुझे मारने के लिए क्या जाल बिछाया गया था। मैंने मन ही मन अपने आपको बधाई दी। सामयिक दुर्घटना ने मुझे किस प्रकार बचा लिया। मैं गिरने के पूर्व यदि एक कदम भी आगे बढ़ गया होता तो यह दुनिया फिर मुझे न देख सकती। मैं इस प्रकार की मृत्यु को अत्यन्त आनन्ददायी समझा करता था। इस प्रकार की मृत्यु में दंडित व्यक्ति के लिए दो रास्ते खुले थे। या तो वह घोर शारीरिक यातना सह कुछ ही देर में अपने प्राण त्याग दे या फिर भूखा घुल-घुलकर अत्यन्त वीभत्स मृत्यु का ग्रास बने। मुझे दूसरे प्रकार की मृत्यु के लिए चुना गया था। दीर्घकालीन यातनाओं से मेरे स्नायु शिथिल और अशक्त हो गए थे। मैं स्वयं अपनी आवाज़ सुनकर डर जाता था। इस प्रकार मैं उन समस्त यातनाओं का उचित विषय बन गया था, जिनका प्रयोग मुझपर होने वाला था।

मेरा अंग-अंग कांप रहा था। इसी दशा में, मैं दीवार की ओर वापस लौट गया। मैंने सोचा कि दीवार के सहारे ही पड़ा-पड़ा मर जाऊंगा। यह मौत कूप में गिरकर मरने से तो अधिक अच्छी होगी।

मैं कूप की स्थिति के सम्बन्ध में तरह-तरह की कल्पनाएं कर रहा था। यदि मेरी मानसिक स्थिति वर्तमान से भिन्न होती तो शायद एक ही छलांग में जीवन का उत्सर्ग कर देना ही मैं अधिक पसन्द करता लेकिन उस समय मैं कायरतम व्यक्ति से भी गया-बीता था। मैं इन गर्तों के बारे में जो कुछ पढ़ चुका था, उसे भी भुलाने में असमर्थ था। इन गर्तों के सम्बन्ध में यह जनश्रुति प्रचलित थी कि बंदी को जब इनमें रखा जाता है तो उसको तत्काल मार डालना दण्ड-दाताओं का लक्ष्य बिलकुल नहीं होता।

इस घोर मानसिक संघर्ष में मैं कई घन्टों जागता रहा। अन्ततः मुझे नींद आ ही गई। जागने पर मैंने फिर अपने पास रोटी और जल-भरा पात्र रखा पाया। प्यास से मेरा गला सूख रहा था। मैंने सारा जल एक ही सांस में पी डाला। शायद इसमें कोई नशीली दवा पड़ी थी। पीते ही मुझे बड़ी ऊंघ आने लगी। थोड़ी ही देर में गहरी नींद आ गई। ऐसी नींद जैसे कोई मृत्यु के अंक में सो गया हो। यह क्रम कितनी देर चला, मैं नहीं जानता। आखिर, मेरी आंख दुबारा खुली तो मुझे अपने चारों ओर की चीजें दिखलाई पड रही थीं। पहले जिस बंदी-घर के दर्शन तक मुझे नहीं हो रहे थे, आखिर अब मैं उसको देख सकता था।

कूप के आकार-प्रकार का मैंने बड़ा गलत अंदाज लगाया था। अंधकूप का व्यास पच्चीस गज से अधिक नहीं था। कुछ मिनट मैं सोचता रहा कि कूप का व्यास जानना बिलकुल व्यर्थ है, क्योंकि वर्तमान परिस्थितियों में कूप का वर्गफल सबसे महत्त्व की बात नहीं थी। लेकिन फिर भी मैं इन तथ्यों में बहुत अधिक रुचि ले रहा था। मैं बराबर सोच रहा था। मेरे नापने में इस प्रकार की गलती कैसे हो गई। अन्ततः मुझे अपनी गलती का कारण पता चल गया। मैं जब पहली बार चक्कर लगाते हुए गिर गया था उस समय मैंने बावन कदम गिने थे। उस समय मैं अपने रवाना होने के स्थान से कदम दो कदम की दूरी पर था। लेकिन मैं गिर गया और सो गया। करवट बदलने में

दो-चार कदम पीछे मैं चला गया, ऐसा लगता है। जब मेरी आंख खुली तो मुझे दिशा-भ्रम हो गया और मैं, लगता है, जिधर से आया था उधर ही लौट गया। अपने भ्रम के कारण मैं यह भी नहीं सोच पाया था कि जब मैं चला था तब दीवार मेरे बाएं थी और जब लौटा तो दाहिने।

कूप की शक्ल के बारे में भी मुझे भ्रम हुआ था। चलते-चलते मैंने यह अनुभव किया था कि कई कोने हैं। इस प्रकार मुझे लगा था कि कूप बड़ा टेढ़ा-मेढ़ा है। आलस या सोकर उठने पर अंधेरे का इतना जबर्दस्त असर आदमी पर पड़ता है। कोने साधारण थे। बंदी-घर चौकोर था। जिसे मैं पत्थर की दीवार समझ बैठा था, वह लोहे या अन्य किसी धातु की परत थी। वह कहीं-कहीं से थोड़ी ऊंचे-नीचे थी। इसका कारण वे जोड़ थे जो लोहे या धातु की परतों के जुड़ने से उत्पन्न हो गए थे। इस दीवार पर तरह-तरह की वीभत्स शक्लें बनी थीं जिनकी चर्चा ईसाई भिक्षुओं ने की है। चुड़ैलों के कंकाल बने थे। इसी प्रकार दीवार पर और भी डरावनी शक्लें बनी थीं। शक्लों की रेखाएं तो काफी उभरी थीं किन्तु उनका रंग उड़ गया था और वह बड़ी भद्दी लग रही थीं। ऐसा प्रतीत होता था कि उनके बद रंग हो जाने का कारण उस काल-कोठरी की नमी थी। फर्श पत्थर का ही था। बीचोंबीच कूप बना था जिसमें गिरने से मैं बाल-बाल बच गया था। काल-कोठरी में कूप एक ही था।

मुझे यह सब बड़ा अस्पष्ट दिखलाई पड़ा। इतना देखने के लिए मुझे बड़ा प्रयत्न करना पड़ा। सोकर उठने के बाद से मेरी हालत बहुत बदल गई थी। अब मैं पीठ के बल सीधा लेटा था। जिसपर मैं लेटा था वह लकड़ी की चौकी-सी थी। इसी चौकी से मैं बंधा था। शरीर के कई भाग इस पट्टी से लिपटे थे। सिर खुला था। हाथ इतना खुला था कि मैं पास रखी रोटी खा सकता था। मैंने देखा कि जल-पात्र हटा दिया गया। यह देख मैं बड़ा परेशान हुआ। परेशान इसलिए हुआ कि मुझे बड़ी प्यास लगी थी। मुझे यंत्रणा देने वाले लोग

चाहते थे कि मुझे प्यासा तड़पाया जाय। तश्तरी में मसालेदार भुना गोश्त देखकर मेरी इस धारणा की और भी पुष्टि हो गई।

मेरी दृष्टि ऊपर की तरफ गई। मैंने देखा, दीवार तीस-चालीस फीट ऊपर चली गई है। वह गोलाई में नहीं थी बल्कि कमरों की दीवारों जैसी चौकोर थी। दीवार में जो शक्लें बनी थीं उनमें से एक पर मेरा ध्यान केन्द्रित हो गया। वह चित्र था काल या समय का। काल की यह शक्ल बिलकुल ऐसी ही थी, जैसी हम चित्रों में देखते हैं। परन्तु इसमें और उनमें अंतर केवल इतना ही था कि बाहर चित्रों में काल को हंसिया हाथ में लिए दिखलाया गया है किन्तु इस शक्ल में काल हाथ में घंटा लिए था। घंटा वैसा ही था जैसा हम पुराने ढंग की घड़ियों में देखते हैं। लेकिन इसमें कुछ ऐसा आकर्षण था जिसकी वजह से मुझे बराबर उसे देखते रहने के लिए बाध्य होना पड़ा। जब मैं इसे (यह चित्र करीब-करीब मेरे सर से ऊपर ही था) देख रहा था तो मुझे ऐसा लगा कि वह घंटा हिल रहा है। पहले तो मैंने इसे कल्पना ही समझा, परन्तु दूसरे ही क्षण मेरी धारणा की पुष्टि हो गई। वह घंटा निरन्तर हिल रहा था। वह बहुत थोड़ी-सी ही जगह में हिल रहा था और निस्संदेह उसके हिलने की गति बड़ी मन्द थी। मैं उसका हिलना भयभीत भाव से देखता रहा। लेकिन पहले से भी अधिक मैं आश्चर्यान्वित हो रहा था। अन्त में ऊबकर मैंने अपनी दृष्टि कोठरी की अन्य चीज़ों पर डाली।

खटपट की आवाज़-सी हुई तो मैंने नीचे फर्श पर दृष्टि डाली। देखा कुछ चूहे दौड़ लगा रहे थे। चूहे बहुत बड़े-बड़े थे। वे कूप से निकल रहे थे। कूप बिलकुल मेरे दाहिने ओर था। मेरे देखते-देखते चूहों की फौज ही आ गई। सबकी लालचभरी दृष्टि मिट्टी के पात्र में रखे गोश्त पर थी। मैं जिस स्थिति में बंधा पड़ा था, उसमें पड़े रहकर चूहों को भगाना बड़ा दुस्साध्य कार्य था।

कोई आधे घंटे बाद, या शायद एक घंटा गुज़र गया हो (क्योंकि

मेरा समय का अनुमान ठीक-ठीक नहीं था), मैंने फिर ऊपर दृष्टि डाली। इस बार मैं बड़ा चकित हुआ। अब वह घंटा करीब एक गज़ की दूरी पर हिल रहा था। उसकी गति भी काफी तेज़ हो गई थी। लेकिन मेरी परेशानी का मुख्य कारण यह था कि वह घंटा पहले से अधिक नीचे आ गया था। मैंने अब देखा कि उसके दोनों छोर अर्ध-चन्द्राकार हैं और चमकते हुए फौलाद के हैं। उनकी नोकें सींगों की तरह मुड़ी हैं और नीचे का हिस्सा उस्तरे की धार की भांति तेज़ है। घंटा ठोस और भारी था और ऊपर से नीचे की तरफ लटक रहा था। वह पीतल की भारी छड़ में लटका था। उसके घूमने से 'हिस-हिस' की आवाज़ आ रही थी।

यंत्रणा-गृह में ईसाई भिक्षुओं ने मेरा अन्त करने के लिए जो कुछ किया है, उसके सम्बन्ध में अब मुझे कोई सन्देह नहीं रहा। ईसाई भिक्षुओं की अदालत के गुर्गों को पता चल गया था कि मैं कूप में गिरने से बच गया हूं। न्यायाधीश चाहते थे कि मैं अंधकूप में गिर-कर जान दूं, क्योंकि उनकी निगाह में मुझसे अपराधी की यही सज़ा थी। लेकिन महज़ रपट पड़ने की दुर्घटना के कारण मैं बच गया था। मैं जानता था कि इन काल-कोठरियों में बहुत-से आदमियों को इसी प्रकार धोखे से मार डाला गया था, या उसे घेर कर मरने के पूर्व इसी प्रकार यंत्रणा दी जाती थी। मैं कूप में गिरने से बच गया था, इसलिए अब मृत्युदण्ड देने की शैतानी योजना भी बदल गई थी। अतएव अन्य कोई विकल्प न होने के कारण मेरे प्राणहरण के लिए भिन्न और अपेक्षाकृत कम कष्टदायी साधन अपनाया जाने वाला था। कम कष्टदायी, इस शब्द के प्रयोग पर मन ही मन विचार कर उस यंत्रणा में भी मैं मुसकरा उठा।

सिर के ऊपर घूमती हुई उस फौलादी धार को अनुभव कर मुझे कितना भयानक कष्ट कई घंटों तक लगातार हुआ, वह किसी भी मनुष्य की सहन-शक्ति के परे है। इंच प्रति इंच, सूत प्रति सूत वह घंटा नीचे उतर रहा था—और उसके उतरने में जितना समय लग

रहा था, वह मुझे युगों का-सा लम्बा प्रतीत होता था। दिन पर दिन गुज़रते जा रहे थे, और ऐसे ही कई दिन गुज़र गए और वह घंटा मेरे इतने नजदीक आ गया कि मेरा सांस लेना कठिन हो गया। तेज़ धार की गंध मेरे नथनों में होकर घुसी जा रही थी। मैं प्रार्थना कर रहा था, और सच यह है कि मैं भगवान् से प्रार्थना करते-करते थक गया था कि वह जल्दी से जल्दी नीचे आ जाए और एक झपाटे में मेरा काम तमाम कर दे। मैं बुरी तरह पागल हो गया था, और ऊपर की तरफ उछल-उछलकर अपने आपको उस फरसे के समीप ले जाने का प्रयत्न कर रहा था। इसके बाद मैं सहसा शान्त हो गया और चमकती उस्तरे की धार के रूप में मौत को देख-देख चुपचाप मुसकराता रहा, ठीक उसी तरह जिस तरह कोई चमकीली वस्तु देख-देखकर बच्चा मुसकराता है।

कुछ समय के लिए मैं बिलकुल अचेत हो गया, लेकिन यह अवस्था बहुत ही थोड़ी देर तक रही, क्योंकि जब मैं होश में आया तो मैंने देखा घंटा करीब-करीब उसी जगह पर है जिस स्थान पर मेरे अचेत होने के पूर्व था। हो सकता है, मैं काफी समय तक अचेत रहा—क्योंकि मैं जानता था कि मुझे देखते रहने के लिए कुछ राक्षस लगे हैं, जिन्होंने मुझे बेहोश पा घंटे का चलना रोक दिया होगा। होश में आने पर मैं कितनी दुर्बलता अनुभव कर रहा था और कितना व्यथित था! शब्दों में दुर्बलता और व्यथा का वर्णन नहीं कर सकता। संभवतया बहुत समय तक कुछ न खाने के कारण ऐसा हो। परन्तु देखिए तो, उस घोर यातना की दशा में भी आदमी को भूख लगती है। बहुत ही कष्टपूर्वक मैंने अपना हाथ बढ़ाया और गोश्त का वह टुकड़ा उठा लिया जो चूहों की कृपा से अब भी पड़ा था। मैं उस टुकड़े को होंठों तक ले ही गया था कि मेरे दिमाग में एक नया ख्याल आया, जिससे मुझे खुशी हुई—आशा-सी बंधी। लेकिन आशा से मैं कर ही क्या सकता था? नया विचार क्या, विचार की झलक मात्र कहिए—ऐसे विचार बहुतों के मन में आते हैं, लेकिन वे क्या

कभी पूरे होते हैं? मैंने जो प्रसन्नता अनुभव की थी वह आशाजनक थी, परन्तु साथ ही मैंने यह भी अनुभव किया कि वह प्रसन्नता उत्पन्न होते न होते मर भी गई। मैंने प्रसन्न बने रहने की जितनी भी कोशिशें कीं—वे निरर्थक सिद्ध हुईं। दीर्घकालीन यातनाओं के कारण मेरे मस्तिष्क की समस्त सामान्य शक्तियां नष्ट हो गई थीं। मैं अपने दिमाग से कुछ भी सोच नहीं सकता था, बिलकुल मूर्ख हो गया था।

काल का घंटा ठीक मेरे ऊपर हिल रहा था, नब्बे अंश का कोण बनाता हुआ। मैंने देखा कि वह फरसे जैसा घंटा मेरे शरीर को छूने के बाद मेरी छाती को काटेगा। वह सबसे पहले मेरे लबादे के कपड़े को चीरेगा—इसके बाद ऊपर उठ जाएगा—फिर नीचे आएगा—फिर अपना काम करेगा—फिर करेगा—और फिर करेगा। अब यह घंटा कोई तीस फीट के दायरे में घूम रहा था। उसके नीचे आने की 'हिस्-हिस्' की आवाज़ बराबर आ रही थी। उसके हिलने की गति इतनी तीव्र थी कि वह लोहे की दीवार तक काट सकता था। लेकिन मेरा लबादा आदि काटने में उसे कुछ मिनट का समय अवश्य लगेगा। इस विचार के आते ही मैं ठहर गया। इससे अधिक मैं कुछ सोच नहीं सकता था। मैं बहुत ध्यान से घंटे को देखने लगा जैसे मेरे एकाग्रता से देखने से उसकी नीचे उतरने की गति मन्द पड़ जाएगी। मैं कल्पना करने लगा कि जब फरसा मेरे कपड़ों को काटेगा तो कैसी आवाज़ होगी—उस ध्वनि की स्नायु-व्यवस्था पर क्या प्रतिक्रिया होगी। मैं इस विषय पर उस समय तक विचार करता रहा जब तक दांत से दांत बंधकर मेरी घिग्घी नहीं निकल गई।

नीचे—बड़ी दृढ़ता से, वह असिधार नीचे खिसकती आ रही थी। मैं उसे नीचे आते देख पागलों की तरह खुश हो रहा था। पहले दाहिने—फिर बाएं—दूर तक वह घंटा घोर व्यथाग्रस्त व्यक्ति की भांति बराबर हिल रहा था। वह मेरे हृदय-वक्षस्थल की ओर ठीक उसी प्रकार बढ़ रहा था जिस प्रकार चीता चोरों की भांति अपने

शिकार की तरफ बढ़ता है। मैं एक बार हंसता था तो दूसरी बार डरकर चिल्लाता था। मेरा हंसना या चिल्लाना मेरे मुक्त होने की भावना या भय की भावना बढ़ जाने का चिह्न था।

नीचे—हां, वह निश्चित और अभिन्न गति से बिना थके निरन्तर नीचे आ रहा था। अब वह मेरी छाती से केवल तीन इंच ऊंचा रह गया था। मैं अपना बांया हाथ छुड़ाने के लिए बुरी तरह प्रयत्न कर रहा था। वह मेरे पंजे से कोहनी तक खुला था। मैं यह हाथ मुश्किल से अपने मुंह तक ले जा सकता था, इससे आगे नहीं। यदि कोहनी से आगे भी मेरा बन्धन खुल जाता तो मैं हाथ से घंटे को रोकने की चेष्टा करता। उस समय तो हिम पर्वत-खण्ड तक को रोकने के लिए अपने हाथ लगा देता।

नीचे अविराम और—असंदिग्धतः, घंटा नीचे खिसकता चला आ रहा था। मैं घोर व्यथित भाव से घंटे की हर हलचल से मानसिक व्यथा से छटपटा उठता था। मेरी आंखें बराबर घंटे के ऊपर और नीचे जाने पर टिकी थीं। घोर निराशा थी। हर बार जब घंटा नीचे आता था तो मेरी आंख बंद हो जाती थी। ऐसी स्थिति में मृत्यु से अवर्णनीय कष्टमुक्ति मिलती। फिर भी मैं यह अनुभव कर कि चिकनी और तेज़ धार किस प्रकार मेरी छाती पर चलेगी, कांप उठता था। मैं इसलिए कांप रहा था क्योंकि मुझे आशा हो उठी थी, बचने की आशा—जो काल-कोठरी में मृत्युदंड प्राप्त व्यक्ति का भी साथ नहीं छोड़ती और उसके कान में कुछ न कुछ फुसफुसाती रहती है।

मैंने देखा कि कोई दस या बारह दफा यदि घंटा और इसी प्रकार भूला और नीचे आता गया तो मेरा लबादा उससे कटना शुरू हो जाएगा। इस विचार के आते ही मेरे मस्तिष्क में घोर निराशा छा गई। घंटे बाद, या यों कहिए कई दिन बाद, मैंने फिर सोचना आरंभ किया। मेरे दिमाग में यह बात आई कि मैं जिस पट्टी से बंधा हूं वह अद्भुत है। मैं किसी अलग रस्सी से नहीं बंधा था। उस्तरे की तेज़ धार वाला घंटा जब पहली बार मुझे स्पर्श करेगा तो सबसे पहले वह मेरी

पट्टियां काटेगा और ये पट्टियां बाईं तरफ से कटेंगी। लेकिन तब वह फौलादी शस्त्र बिलकुल मेरे निकट होगा। परन्तु उस समय बचने का प्रयत्न करना बड़ा भयावह होगा। मेरे ज़रा से संघर्ष का भी नतीजा बड़ा खतरनाक हो सकता है। और फिर क्या वह संभव है? क्या इन यातनादाता दुष्टों ने पहले से ही इन सारी संभावनाओं पर विचार न कर रखा होगा? क्या यह संभव है कि वक्षस्थल के जिस भाग से घंटे की तेज़ धार गुज़रेगी वहीं पट्टी भी बंधी हुई होगी? यह देख कि अब मेरी अंतिम आशा पर भी तुषारापात हो गया है, मैंने अपना सिर ज़रा ऊंचा उठा लिया। इस स्थिति में मुझे अपनी छाती साफ-साफ दिखलाई पड़ रही थी। मैंने देखा कि वक्षस्थल के जिस भाग से शस्त्र गुज़रने वाला था उसे छोड़कर मेरे शरीर का हर अंश पट्टी से बंधा है।

मैंने अपनी गरदन नीचे झुका ली। लेकिन अभी मैं पूरी तरह गरदन झुका भी नहीं पाया था कि मेरे दिमाग में वही विचार आया जिसका मैं ज़िक्र कर चुका हूं। मेरे दिमाग में उपर्युक्त विचार का आधा भाग उस समय आया था जब मैंने गोश्त का टुकड़ा खाने के लिए उठाया था। उस समय वह अनिश्चित था लेकिन इस बार विचार के रूप में पूर्ण था। अब वह पूर्ण था—भले ही क्षीण हो, भले ही पागलों-सा लगे, भले ही अस्पष्ट लगे, लेकिन था सम्पूर्ण। निराश आदमी में जितनी शक्ति होती, उस सारी ताकत को बटोर मैंने उस विचार को कार्यान्वित करना आरम्भ कर दिया।

मैं जिस चौकी पर लेटा था, उसके नीचे बहुत चूहे थे। ये सारे चूहे जंगली, निडर और लूट-खसोटकर खाने वालों जैसे लग रहे थे। ऐसा लगा कि वे अपनी लाल आंखों से घूर-घूरकर मुझे देख रहे हैं और केवल इस बात की प्रतीक्षा कर रहे हैं कि मैं कब बिलकुल निष्क्रिय हो पड़ जाता हूं। मेरे हाथ-पैर हिलाना-डुलाना बंद करते ही वे मुझे नोचना और खाना शुरू कर देते—उनकी आंखों से ऐसा ही लगता था। मैंने अपने आपसे प्रश्न किया—'यहां पर इतने चूहे

क्यो हैं और इस कूप में आखिर ये क्या खाने के अभ्यस्त हैं?'

मेरे बहुत भगाते रहने के बाद भी वे मिट्टी की तश्तरी में रखे गोश्त का अधिकांश भाग खा गए थे। केवल थोड़ा-सा भाग इसलिए बचा रह गया था क्योंकि मैं अपना बांया हाथ लगातार घुमाता रहा था। अन्ततः मेरे हाथ डुलाने में एक प्रकार की जो समानता आ गई थी उससे हाथ हिलाने का प्रभाव जाता रहा था। वे चूहे क्रोध में बहुधा अपने दांत मेरी अंगुलियों में गड़ा देते थे। तश्तरी में जो गोश्त और मसाला तथा उसका तेल वाला जो भाग बचा रह गया था, उसे मैंने अपनी पट्टी पर, जहां-जहां मेरा हाथ जा सकता था वहां-वहां खूब मल डाला। इसके बाद मैंने ज़मीन से अपना हाथ ऊपर उठा लिया और बिलकुल निष्क्रिय हो पड़ रहा। यहां तक कि सांस लेना तक बन्द कर दिया।

पहले तो वे चौंक गए और डर भी गए। इसका कारण मेरा बिलकुल निष्क्रिय ही पड़ रहना था। वे डरकर पीछे हट गए। बहुत से कूप में घुस गए। लेकिन ऐसा केवल क्षण भर के लिए ही हुआ। मैंने जो यह अनुमान लगाया था कि वे बहुत लालची हैं, गलत नहीं था। मुझे निष्क्रिय देख उसमें से दो-एक छलांग मारकर उस चौकी के पास आ गए जिसपर मैं लेटा था। उन्होंने आकर पट्टी को सूंघना शुरू कर दिया। यह शायद अब सभी चूहों को पास आ जाने का संकेत था। कूप तथा आसपास के सभी स्थानों से चूहों की फौज की फौज आ टूटी। वे चौकी पर लपक गए। उसके आरपार दौड़ने लगे। और क्षण भर बाद ही सैकड़ों चूहे मेरे ऊपर चढ़े हुए थे। उन्होंने पट्टी का वह हिस्सा खाना शुरू कर दिया जिसपर गोश्त और उसका मसाला लिपा था। वे मुझे दबाए दे रहे थे—और हर बार ऐसा लगता था कि मेरे ऊपर पहले से भी अधिक चूहे चढ़े हुए हैं। वे मेरे गले पर सवार थे! उनके बोझ से मेरा सांस घुटा जा रहा था। मुझे ऐसी विरक्ति हो रही थी कि उसे प्रकट करने के लिए शब्द नहीं मिलते। वे मेरी छाती पर दौड़ रहे थे और उनके ठंडे पैरों के स्पर्श से मुझे

 न

और भी ठंड लग रही थी। फिर भी मैं सोच रहा था—बस एक मिनट की बात है और उसके बाद संघर्ष समाप्त हो जाएगा। मुझे लग रहा था कि पट्टी ढीली हो गई है। मैं यह भी जान रहा था कि एक से अधिक स्थान पर वह खुल भी गई है। मनुष्य में जितनी संकल्प-शक्ति है, उससे कहीं अधिक दृढ़ निश्चय करके मैं कुछ देर और चुपचाप पड़ा रहा।

न तो मेरे अनुमान करने में ही कोई गलती हुई थी और न मेरी तपस्या ही विफल हुई। अन्ततः मैंने अनुभव किया कि मैं स्वतन्त्र हो गया हूं। लेकिन घंटा करीब-करीब मेरे शरीर को छूता हुआ झूल रहा था। उसने मेरे लबादे के कपड़े और अस्तर को काट दिया था। वह दो बार और गुज़रा और मेरे सारे शरीर में एकबारगी पीड़ा हो उठी। लेकिन बचने का भी मौका आ गया था। मैंने हाथ हिलाया था कि मेरी मुक्ति के दाता चूहे—शोर मचाते हुए भाग गए। मैं धीरे से खिसककर उस फरसे की पकड़ के बाहर हो गया—मैं स्वतंत्र था।

स्वतन्त्र!—ईसाई भिक्षुओं की अदालत की पकड़ में आ जाने वाला मनुष्य स्वतन्त्र तो कभी हो ही नहीं सकता। मैं मुश्किल से चौकी से उतरा था कि घंटे का झूलना बन्द हो गया। किसी अदृश्य शक्ति ने उसे ऊपर खींच लिया था। इससे मैंने भलीभांति शिक्षा ली। मैंने यह खूब समझ लिया कि मेरी प्रत्येक गतिविधि को भलीभांति देखा जा रहा है। स्वतन्त्र—हां, मैं एक यंत्रणापूर्ण मृत्यु से अवश्य बच गया था, परन्तु अब मुझे मृत्यु से भी भयंकर यंत्रणा दी जाएगी, यह मैं समझ गया। यह सोचते-सोचते मैंने उन दीवारों पर नज़र डाली जो लोहे की थीं। लेकिन मेरी काल-कोठरी की दीवारों में कुछ परिवर्तन हो गया था। यह परिवर्तन कैसा था—इसे मैं पहले जान न सका, किन्तु मैंने इतना अवश्य समझ लिया कि परिवर्तन अवश्य हुआ है। कई मिनट तक कांपता हुआ मैं सपना-सा देखता रहा। मैं न जाने क्या-क्या बातें सोचता रहा। परन्तु जब मेरी चेतना वापस लौटी तो पहली बार मुझे पता लगा कि इस काल-कोठरी में गंधक जैसी कोई

चीज जलाई जा रही है। इसके जलने से प्रकाश भी हो रहा था। यह रोशनी दीवारों के नीचे एक इंच चौड़े हिस्से में चारों तरफ हो रही थी। ऐसा लगता था कि फर्श से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। मैंने उस दरार से, जिसमें से रोशनी आ रही थी, बाहर देखने की कोशिश की, लेकिन मुझे कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा।

मैं नीचे से बाहर देखने की असफल चेष्टा कर जैसे ही उठा, वैसे ही यह रहस्य स्पष्ट हो गया।

जब मैं बाहर न देख सका तो उठ पड़ा। उठते-उठते मेरी समझ में आगया कि लौह कोठरी की शक्ल क्यों बदल रही है। दीवारों पर जो शक्लें बनी थीं, वे अपने स्थानों पर उभरी हुई तो खूब थीं, लेकिन उनका रंग उड़-सा गया था। (यह मैं पहले बता चुका हूं) अब उन शक्लों में रंग आ रहा था और कुछ-कुछ समय बाद वे जोरों से चमकने लगती थीं। उन शक्लों का चमकना देखते ही बड़े से बड़े साहसी आदमी के छक्के छूट जाते, मेरी तो बात ही क्या? राक्षसों की शक्लों की आंखें मुझे हजारों तरफ से घूर रही थीं। उनकी आंखें जलते शोलों की तरह थीं और मैं अपने आपको किसी भी प्रकार समझा नहीं पा रहा था कि ये चित्र यथार्थ नहीं हैं।

अयथार्थ!—सांस लेते ही मेरे नासिका-रंध्रों में गरम लोहे से निकलने वाली लपटों की गंध घुसी जा रही थी। सारी कोठरी गंध से भर गई थी। उन खूनी तस्वीरों में अब चारों ओर गहरा लाल और पीला तथा नारंगी रंग फैलता जा रहा था। मैं हांफ रहा था। मेरा दम घुटा जा रहा था। अब अपने यंत्रणादाताओं की योजना में मुझे कोई संदेह नहीं रहा था। ओह, कितनी क्रूरता! ओह, आदमी नहीं, वे शैतान थे! मैं गरम दीवारों के पास से खिसककर कोठरी के बीच में आ गया था। यहां निकलने वाली गरम लपटों के बीच कुएं की शीतलता के विचार मात्र से विश्राम मिलता था। मैं बिलकुल कूप की मुंडेर पर आ बैठा था। मैंने गरमी से फटी जा रही आंखों से कुएं के नीचे देखा। कोठरी के ऊपर का भाग तपकर इतना चमक रहा

था कि उसकी रोशनी से कुएं के अन्दर का प्रत्येक भाग प्रकाशमान था। फिर भी मेरी आत्मा ने यह नहीं स्वीकार किया जिसका प्रत्यक्ष प्रमाण मेरे सामने था। आखिर वह चीज भी मेरे दिमाग में घुमी—जबरन घुसी। वह मुझे जलाती हुई मेरी बुद्धि में घुसी। ओह! कैसी भयानक बात थी। ओह, कितनी यातना थी। इसे छोड़कर मैं कुछ भी सहन करने को तैयार था। मैं चीखता हुआ मुंडेर पर से चला आया और दोनों हाथों में अपना मुंह छिपा फूट-फूटकर रोने लगा।

उष्णता निरन्तर बढ़ती जा रही थी। मैंने एक बार पुनः ऊपर देखा। मैं ऐसे कांप रहा था जैसे जाड़े के बुखार में कोई कांपता हो। अब कोठरी में दूसरा परिवर्तन होना शुरू हो गया था। अब उसका आकार बदल रहा था। पहले की भांति इस बार भी मैं समझ नहीं पाया था कि इस परिवर्तन का क्या अर्थ है। परन्तु अधिक समय तक मैं संदिग्धावस्था में नहीं रहा। धर्म न्यायालय (!) की प्रतिशोध की भावना मेरे दो बार बच जाने के कारण बहुत बढ़ गई थी। अब आतंक-सम्राट मेरे साथ और अधिक खिलवाड़ करने को राजी नहीं था। अब कमरा बिलकुल चौकोर हो गया था। कमरे की दीवारें अब अधिकाधिक एक दूसरे के पास आती जा रही थीं। वे रुकीं नहीं और मैं चाहता भी नहीं था कि रुकें। मैं उन लाल दीवारों से जाकर चिपक सकता था क्योंकि इसके बाद फिर मुझे शाश्वत शान्ति मिल जाती। मैंने कहा, "कूप को छोड़ मैं अन्य किसी भी जगह मौत का आलिंगन करने को प्रस्तुत हूं।" स्पष्ट था कि लोहे की दीवारों को इसलिए तपाया जा रहा था कि मैं उनसे घबराकर कूप में पड़ूं। क्या उन दीवारों से निकलने वाली लपटों को मैं सह सकता था? यदि मैं उनको सह भी लेता तो क्या दीवारों के पास खिसकने के दबाव को सह पाता? दीवारों की ऊंचाई कम होती जा रही थी और अब सोचने का तनिक भी मौका नहीं था। ऊपर से जबड़ा खोलती हुई दीवार आ रही थी। मैं पीछे खिसका तो बगल की दीवारें आगे आ गईं। अन्त में कोठरी में मुझे पैर रखने के लिए तिल भर भी जगह नहीं

रही। मैंने संघर्ष करना बन्द कर दिया था, लेकिन मेरी व्यथा—अन्तर्व्यथा एक ज़ोर के चीत्कार के साथ फूट पड़ी। मैं मुंडेर पर लड़खड़ा रहा था—मैंने निगाह घुमाई।—

—कि बहुत-से लोगों के एक साथ बोलने की आवाज़ सुनाई पड़ी। बहुत-से बिगुल एक साथ ज़ोरों से बज उठे। ऐसा लगा कि एक साथ हज़ारों बिजलियां गिर पड़ी हों। वे भयानक दीवारें एकदम तेज़ी से पीछे हट गईं। एक लम्बे हाथ ने बेहोश हो लड़खड़ाते हुए कुएं में गिर जाने से पूर्व मुझे थाम लिया। यह लम्बा हाथ जनरल लासालि का था। फ्रांस की फौज टोलेडो में प्रविष्ट हो गई थी। पादरियों की वह अदालत अब अपने दुश्मनों के हाथ में थी।

४ | और फिर हवेली ढह गई!

पतझड़ का मौसम था। आकाश में बादल घिरे थे। दिन बड़ा शिथिल लग रहा था। चारों तरफ अंधेरा छाया था। इसी दिन मुझे निर्जन और शुष्क देहाती सड़क पर घोड़े की पीठ पर यात्रा करनी पड़ी। दिन भर चलने के बाद जब सांझ की छाया घिरने लगी तो मैंने देखा, आखिरकार मेरी मंज़िल आ गई। वह उदास हवेली—हाउस आफ अशर—मेरे सामने है। कारण मैं नहीं जानता—लेकिन भवन की पहली झलक मिलते ही मैं एक प्रकार के असह्य विषाद में डूब गया। मैंने इस विषाद को असह्य कहा है। क्यों कहा है? इसकी वजह मैं बताता हूं। प्राकृतिक दृश्य चाहे कितना ही निर्जन, एकान्त या भयावह हो किन्तु मस्तिष्क पर उस दृश्य की प्रतिक्रिया सदैव काव्यात्मक, भावनात्मक होती है; लेकिन मंज़िल के आसपास का दृश्य देखकर जो सुख अनुभव होना चाहिए था, वह नहीं हुआ; इसीलिए मुझे विषाद का बोझ असह्य प्रतीत हुआ। मैंने अपने सामने का दृश्य देखा—मकान की निर्जीव शीतल दीवारों को देखा। आंखों-सी प्रतीत होने वाली हवेली की खिड़कियों पर नज़र डाली। हवेली के आसपास उग आई घास को देखा। बेजान पेड़ों के सफेद तनों को देखा। इन सबको देख विषाद में ऐसा दब गया कि मैं उसकी कल्पना एक के सिवाय अन्य किसी लौकिक अनुभूति से कर ही नहीं सकता। अफीमची नशे में सब कुछ भूला रहता है। किन्तु नशा उतरते ही वह कटु दैनिक समस्याओं को अपने सामने मुंह बाए खड़ा देखता है। नशे का पर्दा गिरते ही इन दृश्यों का वीभत्स रूप उसके सामने आ जाता है। इसे देख जो दशा अफीम के नशे में मस्त रहने वाले आदमी की होती है, वही कुछ-कुछ मेरी भी हो रही थी। दिल बर्फ की तरह

जमा हुआ था, ऐसा लग रहा था कि वह डूबा जा रहा हो, हृदय में व्यथा घर किए बैठी थी। विचार करने की शक्ति लुप्त हो गई थी। आनन्ददायी कल्पना बार-बार मस्तिष्क को कुरेदती थी लेकिन वह नैसर्गिक रूप से आनन्दित नहीं हो पा रहा था। मैं रुककर सोचने लगा वह क्या है, आखिर वह क्या बात है जो इस हवेली के दर्शन मात्र से मेरी समस्त विचार-शक्ति का अपहरण किए ले रही है? यह मानसिक दशा पहेली थी और बुझाए नहीं बूझती थी। मैं उन कल्पित छायाओं से भी संघर्ष करने में अपने आपको असमर्थ पा रहा था, जो मुझे विचारमग्न अवस्था में घेरे ले रही थीं। अन्ततः मैं इस परिणाम पर पहुंचा, जिसे संतोषजनक नहीं कहा जा सकता, कि निस्सन्देह कुछ प्राकृतिक दृश्य होते ही ऐसे हैं, जिनकी हमपर उक्त आशय की प्रतिक्रिया होती है, और हमपर ऐसे दृश्यों की जो प्रतिक्रिया होती है उसका विश्लेषण करने में हम असमर्थ रहते हैं। संभव है, प्राकृतिक दृश्य में कुछ फेर-बदल कर देने से ऐसी व्यथापूर्ण प्रतिक्रिया देखने वाले पर न हो। अपने इसी विचार के अनुसार मैंने कार्य किया। हवेली के पास जो सूखा और काला पेड़ था उसके पास जाकर मैंने रास खींचकर घोड़ा खड़ा कर दिया। इसके बाद नीचे की ओर देखा। भूरी घास कुछ दब गई थी। पेड़ों के कटे तने मुंह खोले पड़े थे और हवेली की खिड़कियां खुली और भावहीन आंखों-सी लग रही थीं। यह दृश्य देख मैं पहले से भी अधिक थर्रा गया।

ओहो, इसी उदास हवेली में कुछ सप्ताह मुझे छुट्टी मनानी है। हवेली के स्वामी रोडरिक अशर मेरे बाल्यकाल के मित्र हैं। इनसे आखिरी मुलाकात हुए मुद्दत बीत गई है। कुछ दिन हुए देश के सुदूर भाग में मुझे इनका पत्र मिला। पत्र में कुछ ऐसी कातरता थी, अधीरता और व्यथा थी कि उसके उत्तर में, मुझे स्वयं आना पड़ा। पत्र पढ़कर ऐसा लगा कि मेरे मित्र बड़े व्याकुल हैं। पत्र में लिखा था, वे शरीर से बहुत रुग्ण हैं और उन्हें कुछ ऐसी चिन्ता है, जिसके भार से वे दबे जा रहे हैं। वे मुझसे मिलना चाहते हैं। मैं ही उनका एकमात्र

घनिष्ठ मित्र हूं। संभवतया, मेरे साथ रहने से उनके चित्त में उत्फुल्लता आ जाए और उनको व्याधि मुक्त होने में सहायता मिले। इसी तरह की और बातें भी पत्र में थीं, जिनसे लगता था कि हृदय का दुःख उन पंक्तियों में उन्होंने खोलकर रख दिया है। उन्होंने बड़ी आशा से मुझे बुलाया है। इस निमंत्रण को स्वीकार करने में मैं कोई हिचक दिखला ही नहीं सकता था। निमंत्रण को अजीब समझते हुए भी मैं यहां आ गया हूं।

हालांकि बचपन में हम दोनों घनिष्ठ मित्र थे, लेकिन तब भी मैं अपने मित्र के सम्बन्ध में बहुत कम जानता था। वे अत्यधिक एकान्तप्रिय थे और एकान्त में रहना उनके स्वभाव का अंग बन गया था। मैं जानता था कि मेरे मित्र का परिवार बहुत समय से अपनी सुरुचि-सम्पन्नता के लिए प्रसिद्ध है। कला का तो वह बड़ा ही प्रेमी है। संगीत शास्त्र की कलासिद्ध और लोकप्रिय चीजों से ही उनके परिवार को प्रेम नहीं है, बल्कि संगीत की सूक्ष्मताओं का भी उसको ज्ञान है जो कला-पारखियों को ही हो सकता है। उनके परिवार ने कई गुप्त लेकिन काफी बड़े-बड़े दान भी किए थे। मैं उनके परिवार के सम्बन्ध में एक और महत्त्वपूर्ण बात भी जानता था। वह यह कि उनकी वंश-परम्परा सीधी चली आती है। उसमें कभी कोई व्यवधान नहीं पड़ा। यही कारण था कि हवेली का वही रूप आज भी बना था, उसमें रहने वालों का वही चरित्र आज भी है, जो शताब्दियों पूर्व था। सभी परम्पराएं पिता से पुत्र को बराबर मिलती चली गईं। अतएव आसपास के ग्रामीण किसानों के लिए हाउस आफ अशर परिवार का नाम भी था और परिवार की हवेली का भी।

मैंने पास ही के तालाब पर दृष्टि डाली। मेरे इस प्रयोग का परिणाम यह हुआ कि जो प्रभाव मुझपर सबसे पहले पड़ा था वह और भी पुष्ट हो गया। हवेली को और उसके आसपास भी प्राकृतिक छवि को देखकर मूढ़ धारणा बन गई थी (मूढ़ धारणा के अतिरिक्त और क्या कहूं?) वह तालाब में प्राकृतिक दृश्य की छाया देख-

कर और बढ़ गई। जिन भावनाओं का आधार भय होता है, वे सब इसी प्रकार बढ़ती हैं, यह मैं जानता हूं और संभवतः यही कारण है कि जब मैंने तालाब से अपनी दृष्टि हटाकर हवेली पर डाली तो मेरे दिमाग में एक विचित्र विचार आया। वह वस्तुतः बड़ा हास्यास्पद है। लेकिन मैं उसकी चर्चा केवल उस अनुभूति को प्रकट करने के लिए कर रहा हूं जिसके भार से मैं दबा जा रहा था। मुझे ऐसा लग रहा था कि हवेली और इसके आसपास के दृश्य का शेष संसार से सम्बन्ध नहीं है। वह हवेली और वह दृश्य शुष्क वृक्षों, भूरी दीवारों और इस शान्त तालाब में से ही उठ खड़ा हुआ है। सब कुछ ऐसा लग रहा था जैसे व्याधिपूर्ण, रहस्यमय, निष्क्रिय, शिथिल, अस्पष्ट, सलेटी रंग का नीहार-सा हो।

अकस्मात् मैंने अपने आपको झटकारा और अपनी कल्पना को सपना समझ ज़रा ध्यान से हवेली को देखना शुरू किया। हवेली की मुख्य विशेषता उसकी प्राचीनता थी। युगानुयुगों की मुद्रा उसपर अंकित थी। यह भवन के रंगों के उड़ जाने से स्पष्ट था। हवेली का बाह्य भाग हलके और छोटे कुकुरमुत्तों से जहां-तहां ढका था। बीच-बीच में कहीं-कहीं जाले थे। लेकिन ऐसा नहीं लगता था कि हवेली गिरी जा रही है। कहीं से दीवार का कोई भाग गिर नहीं रहा था। मकान के सारे भाग मज़बूत लगते थे लेकिन किसी-किसी स्थान पर लगता था कि कोई पत्थर भरभराकर गिर पड़ेगा। इन दोनों का अस्तित्व बड़ा असंगत-सा लगता था। लकड़ी का काम बहुत पुराना हो गया था। बहुत दिनों से उसकी मरम्मत नहीं हुई थी। खिड़कियां और दरवाज़े चटख गए थे। ऊपर से रंग उड़ गया था। इसके अलावा और सब दृष्टियों से इमारत मज़बूत लगती थी। शायद किसी दर्शक को दीवार में पड़ी वह हलकी दरार भी दिखलाई पड़ जाए जो हवेली के सामने वाले हिस्से में छत से शुरू होती थी और फिर टेढ़ी-मेढ़ी चलती बगल की दीवार से नीचे आकर तालाब-जल में खो जाती थी।

इन सबको देखता हुआ, मैं एक छोटी-सी पगडण्डी से हवेली के हाते में घुसा। नौकर ने उतरते ही मेरा घोड़ा थाम लिया और मैं हाल में घुस गया। दूसरा नौकर मुझे कई टेढ़े-मेढ़े और अंधेरे रास्तों से होता हुआ अपने स्वामी के अध्ययन-कक्ष में ले गया। पता नहीं कैसे जिन भावनाओं का ऊपर मैं ज़िक्र कर आया हूं, उनके अध्ययन-कक्ष की ओर जाते हुए और भी उनमें वृद्धि हुई। कमरों और दालानों के ऊपरी भाग की नक्काशी, दीवारों के चित्र, फर्श की बढ़िया काली लकड़ी और इधर-उधर रखे चषक—मेरे आसपास की ये सारी चीज़ जिनसे मैं बचपन से परिचित था, मैं यह तो नहीं बतलाता कितना—मेरे दिमाग में भयावह कल्पनाएं बनाने में सहायक हो रही थीं। एक जगह सीढ़ियों पर मुझे परिवार के चिकित्सक के दर्शन हुए। उनकी मुखमुद्रा में चिन्ता और उलझन थी, कुछ कुटिलता भी थी। उन्होंने मुझे भयातुर उत्सुकता से देखा और आगे निकल गए। कुछ ही क्षणों में नौकर ने अध्ययन-कक्ष का दरवाज़ा खोल दिया और मुझे गृहस्वामी के सामने पहुंचा दिया।

यह कमरा, जिसमें मैं खड़ा था, बहुत बड़ा था। इसकी छत काफी ऊंची थी। खिड़कियां लम्बी, तंग और नुकीली थीं। वे इतनी ऊंची थीं कि फ़र्श से उन तक पहुंचना ही कठिन था। झिझिरियों वाले कांच से हलकी लाल रोशनी कमरे में आ रही थी। आसपास की बड़ी-बड़ी चीज़ें इस रोशनी में साफ दिखलाई पड़ रही थीं। लेकिन कमरे में बैठे सुदूर लोगों पर इतना अंधेरा था कि उन तक निगाह पहुंचना कठिन था। गहरे रंग के पर्दे दीवारों पर टंगे थे। कमरे में इधर-उधर का तमाम फर्नीचर भरा था। इसे देखकर परेशानी होती थी। फर्नीचर पुराना था, और टूटा हुआ भी था। बहुत-सी पुस्तकें और वाद्ययंत्र इधर-उधर पड़े थे। इनसे भी कमरे के वातावरण में सजीवता नहीं आ पाई थी। मुझे लगा, मैं घोर विषादमय स्थान में खड़ा हूं; चारों तरफ कठोरता, गहरी और अपार निराशा छाई थी।

मेरे घुसते ही अशर अपने सोफे से उठ खड़ा हुआ। उसने लपक-

कर मेरा जिस तरह स्वागत किया उससे पहले तो मुझे ऐसा लगा कि वह दिखावटी है; दुनिया का विरागी व्यक्ति चेष्टा कर तकल्लुफ दिखा रहा है। लेकिन चेहरे को देखते ही अपने स्वागत की हार्दिकता में जो संदेह मुझे था, वह दूर हो गया। हम दोनों बैठ गए और कुछ क्षणों तक, जब तक हम एक दूसरे से बोले नहीं, मैं अशर को तरस खाता हुआ देखता रहा। आदमी का चेहरा-मोहरा कुछ ही काल में इतना बदल सकता है; रोडरिक अशर की शक्ल के परिवर्तनों को देखकर मुझे सहसा विश्वास नहीं हुआ। मैं बड़ी कठिनाई से विश्वास कर सका कि मेरे सामने जो आदमी बैठा है वही मेरे बचपन का मित्र है। इतना होते हुए भी उसकी मुख-मुद्रा की विशेषताएं ज़रा भी नहीं बदलती थीं। वर्ण गहरा पीला था, बड़ी-बड़ी तरल और कुछ चमकती हुई आंखें, ऐसी आंख जैसी मैंने पहले कभी नहीं देखीं; होंठ पतले-पतले और कुछ पीलापन-सा लिए हुए, किन्तु उनका कटाव बड़ा ही सुन्दर; हिब्रू मूर्तियों जैसी नाक, किन्तु नासिका-रंध्र कुछ चौड़े और मूर्तियों से कुछ भिन्न; घुमावदार सुन्दर ठोड़ी; रेशम जैसे मुलायम केश, कुछ भूरापन लिए हुए; इनके अलावा चौड़ा मस्तक—ये सारी विशेषताएं ऐसी थीं कि चेहरे को आसानी से भुलाया नहीं जा सकता था। इन विशेषताओं में वृद्धि हो जाने के कारण और इसके फलस्वरूप हुई विकृति से जो भाव अभिव्यक्त होते थे, उन सबने मिलकर इतना परिवर्तन कर दिया था कि मुझे यह शक होने लगा था—'यह वही आदमी है क्या, जिसे मैं अपना मित्र समझता हूं?' उसकी त्वचा का पीतवर्ण, आंखों की जादूभरी चमक, इन दोनों में अतिवृद्धि देख मैं चौंक गया था; चौंक ही नहीं कुछ-कुछ डर-सा भी गया था। उसके वे रेशमी बाल बहुत बढ़ गए थे। ये बाल उसके चेहरे पर बार-बार गिर ही नहीं पड़ते थे, बल्कि ऐसा लगता था कि वे तैर रहे हैं। उसकी पागलों-सी शक्ल देख, मैं प्रयत्न करके भी यह तय नहीं कर पा रहा था कि वह आदमी की ही शक्ल है या किसी और की।

अपने मित्र के उठने-बैठने, बोलने-चालने आदि के ढंग की विषमता, अस्वाभाविकता भी जल्दी ही मैंने देख लीं। इसका कारण भी मैंने समझ लिया। यह था भय, स्नायु और निर्बलता जनित दौरों का डर और उनको नियन्त्रण में रखने की सतत किन्तु असफल चेष्टा। यह बात नहीं कि मैं इस प्रकार की स्थिति का सामना करने के लिए तैयार नहीं था। ऐसी ही कुछ बात होगी, यह तो मैंने पहले ही कल्पना कर ली थी। मेरी कल्पना का आधार न केवल वह पत्र था, जो मुझे मिला था बल्कि उसकी बचपन की कुछ बातों की कमज़ोरियों की स्मृति भी थी। इसके अलावा उसके स्वास्थ्य और स्वभाव-वैचित्र्य से भी मैंने उक्त परिणाम निकाला था। क्षण भर वह बहुत प्रसन्न भाव से बात करता और क्षण बाद ही मुंह फुला लेता। उसके कण्ठस्वर में भी इसी प्रकार परिवर्तन होता रहता था। कभी तो वह ऐसे बोलता जैसे चीख रहा हो (ऐसा लगता था कि पाशविक वृत्तियां जाग ही पड़ने वाली हों); और कभी बहुत ही संयत ढंग से धीरे-धीरे। कभी सहसा ज़ोर से चिल्लाने लगता और कभी ऐसा प्रतीत होता कि वह बहुत दूर नीचे किसी कुएं से बोल रहा है, कभी दृढ़तापूर्वक और संतुलित कण्ठ से बिलकुल साधारण आदमी की तरह। उसकी दशा की तुलना ऐसे शराबी या अफीमची से की जा सकती थी जिसके सुधरने की या संभलने की कोई आशा ही न रही हो।

इसी प्रकार की अवस्था में अशर ने मुझे बतलाया कि उसने पत्र लिखकर मुझे क्यों बुलाया है, वह मुझसे मिलने को क्यों व्याकुल था और वह मुझसे कितनी सांत्वना पाने की आशा करता है। कुछ हद तक उसने अपनी बीमारी भी बतलाई। उसने बतलाया कि जो व्याधि उसके शरीर में घर कर गई है, वह उसके परिवार के लोगों को बराबर रही है और जिसका कोई इलाज ही नहीं है। यह मात्र स्नायविक रोग है। इसके साथ ही उसने यह भी बतलाया कि यह रोग अपने-आप ही चला जाता है। इस रोग के कारण उसे विचित्र प्रकार के दौरे आते हैं। कुछ दौरों का हाल सुनकर तो मैं घबरा गया और कुछ

को सुनकर मैंने उसमें दिलचस्पी दिखलाई। इन दौरों का जो हाल जिन शब्दों में और जिस ढंग से उसने सुनाया, उनमें सचमुच बड़ा बल था। स्नायविक जकड़ के कारण उसे बड़ा कष्ट उठाना पड़ता था। बहुत ही साधारण भोजन वह पचा पाता था। कुछ विशेष प्रकार के वस्त्र ही पहन सकता था। किसी भी फूल की गंध वह सहन नहीं कर सकता था। ज़रा-सी भी रोशनी उसकी आंखें बरदाश्त नहीं कर पाती थीं। तन्तु-वाद्यों की कुछ विशिष्ट ध्वनियां ही थीं, जिन्हें सुनकर वह भयभीत नहीं हो उठता था।

मैंने देखा था, वह कई बातों से बहुत भयभीत रहता था। वह कहता था, "इस भय से निश्चित ही मैं मर जाऊंगा। मेरा भविष्य में क्या होगा, यही भय खाए जाता है। मुझे उन घटनाओं से डर नहीं लगता, यदि वे हो जाती हैं, लेकिन वे होंगी, इस कल्पना से बड़ा डर लगता है। छोटी से छोटी घटना से भी मैं केवल इसलिए डरता हूं कि मुझे कहीं फिर दौरा न आ जाए। मैं खतरों से नहीं डरता, लेकिन उन खतरों की आशंका ही मेरे दुःखों की जड़ है। इस भयातुर दशा में—ऐसी कातर अवस्था में ही भय-रूपी राक्षस से लड़ते-लड़ते एक न एक दिन आएगा, जब मैं अपने जीवन से हाथ धो बैठूंगा।"

थोड़े-थोड़े समय के अन्तर से संदिग्ध एवं अस्पष्ट संकेतों से मुझे अशर की मानसिक स्थिति की एक और विशेषता का पता चला। उसकी अपनी हवेली के बारे में भी, जिसमें वह रहता था, अजीब-अजीब धारणाएं थीं। वर्षों बीत गए थे, लेकिन उसने अपने घर से बाहर कदम नहीं रखा था। उसका वह भय इतना स्पष्ट था कि उसके सम्बन्ध में इस स्थान पर कुछ भी कह सकना मुश्किल है। उसका कहना था कि उक्त भय ने उसकी आत्मा को अपनी मुट्ठी में कर रखा है। उसका कहना था, और दीर्घकाल तक इसी प्रकार की यातनाएं भुगतते-भुगतते उसे विश्वास भी हो गया था, कि उस मकान की भूरी दीवारों छतों तथा धुंधले तालाब, जिसमें उस हवेली की प्रतिकृति सदैव बनी रहती थी, इन सबका उसके जीवन से सम्बन्ध है।

फिर भी अशर ने यह स्वीकार किया था कि स्वीकारोक्ति में झिझक कितनी ही हो, उसके विषाद का विशिष्ट कारण भी है। उसकी निराशा और विरक्ति तथा दुःख का मूल स्वाभाविक और दृढ़ है। वह है उसकी एकमात्र जीवित रिश्तेदार और बहन की लम्बी बीमारी। वह बहन जिसने उसे जीवन भर स्नेह दिया, अब अपने जीवन का अन्तिम सांसें भर रही है। मेरे मित्र ने अत्यन्त दुःखपूर्वक कहा था, "उसकी मौत के बाद मैं ही अपने प्राचीन खानदान की एकमात्र याद बच रहूंगा (और मेरी निराश और अस्वस्थ दशा आप देख ही रहे हैं)।" मैं उसकी यह बात कभी नहीं भूल सकता। जब वह यह कह रहा था तभी कमरे के किसी सुदूर भाग से लेडी मेडलीन गुज़रीं और मुझसे बिना मिले या बात किए, चली गईं। मैं चकित भाव से, जिसमें भय भी मिश्रित था, उनको देखता ही रह गया। मेरे मन में यह भाव क्यों आया—यह बताना कठिन है। मैं स्तब्ध भाव से उन्हें वापस जाते हुए देखता रहा। कुछ ही देर में दरवाजा बन्द हो गया और लेडी मेडलीन की शक्ल मेरी आंख से ओझल हो गई। अब मैंने मुड़कर भाई को देखा। अशर ने दोनों हाथों के बीच अपना मुंह छिपा रखा था और उसकी सूखी अंगुलियां भीग गई थीं और उनसे आंसू बह रहे थे।

लेडी मेडलीन की बीमारी का, डाक्टर कोशिश कर करके हार गए थे लेकिन कोई निदान नहीं कर पाए थे। बीमार ने अपनी फिक्र बिलकुल छोड़ दी थी, शरीर प्रतिदिन अपने आप घुलता जा रहा था और बहुधा ऐसे दौरे आते थे कि अंग-अंग अकड़ जाता था और वे मूर्छित हो जाती थीं। ये सब ऐसे लक्षण थे जिनसे रोग का कोई निदान ही नहीं हो पाता था। अभी तक बड़ी वीरता से उन्होंने व्याधिजनित कष्टों का सामना किया था और खाट से बिलकुल नहीं लगी थीं। परन्तु मैं जिस दिन वहां पहुंचा, उसी दिन रात को उनके भाई ने मुझे शोकपूर्वक बतलाया कि वे व्याधि की सर्वनाशी शक्ति का और सामना नहीं कर सकीं और आखिर गिर ही गईं। मुझे, आने

के बाद, लेडी, मेडलीन की एक झलक दूर से मिल गई और उसी झलक को मुझे अंतिम दर्शन समझना चाहिए। वे कुछ दिन जीवित भले ही रहें, लेकिन मैं उन्हें न देख पाऊंगा।

कई दिन गुज़र गए। लेडी मेडलीन की चर्चा न तो मैंने ही की और न अशर ही उनकी बात ज़बान पर लाया। इन दिनों मैंने अपने मित्र का कष्ट कम करने का यथाशक्ति प्रयत्न किया। कभी हम लोग तूलिका ले चित्र बनाते तो कभी पुस्तकें पढ़ते। और कुछ न होता तो स्वप्न में डूबा-सा मैं अपने मित्र का गिटार बजाना ही सुनता। इस प्रकार हम एक दूसरे के अधिकाधिक निकट आए और मुझे उसके मानस-अन्तराल के अन्तरतम में प्रवेश करने का अवसर मिला। परन्तु मैंने अनुभव किया कि मैं अपने मित्र को जितना ही प्रसन्न करने की चेष्टा करता उतना ही वह और निराश तथा दुःखी होता। ऐसा लगता कि उसके विषाद में, जो उसके मस्तिष्क की विशेषता बन गया था, संसार की सब चीज़ें डूब जाएंगी।

मैंने अशर, उस हवेली के स्वामी, के साथ एकान्त में गंभीरता-पूर्वक जो घंटे बिताए थे, उनकी स्मृतियां कभी न भूलेंगी। फिर भी मुझे विश्वास नहीं है कि मैंने जो कुछ अपने मित्र के साथ पढ़ा, या जिस प्रकार उसके साथ समय बिताया ठीक-ठीक वर्णन कर सकूंगा। अन्य बातों के साथ उसके गिटार वादन के राग सदैव मेरे कानों में गूंजते रहेंगे। वान वेबर के अंतिम वाल्टज़ (अंग्रेज़ी धुन) पर आधा-रित वे निराली ही गतियां थीं जिनकी याद अब भी आ जाने पर हृदय दुःख से भर आता था। इसके वे चित्र, जिनको बनाते हुए, वह अपनी कल्पना में मस्त हो जाता था और तूलिका के प्रत्येक स्पर्श से वे और अधिकाधिक अस्पष्ट हो जाते थे, उन्हें देख-देखकर मैं (वे आज भी मेरे दिमाग में ज्यों के त्यों अंकित हैं) थर्रा उठता था। मैं चाहे जितना प्रयत्न करूं किन्तु उन चित्रों के भावों को अपने वाक्यों में पूरी तरह व्यक्त कर ही नहीं सकता। मेरे सारे प्रयत्नों का परि-णाम आंशिक भावाभिव्यक्ति ही होगा। उसके चित्रों की निपट

सरलता ही ध्यान आकृष्ट कर लेती थी और उनकी कला की विशु-द्धता देख आदमी कलाकार के सामने नत हो जाता था। यदि किसी भी आदमी को भावों को चित्रित करने में सफलता मिली है, तो वह रोडरिक अशर ही था। उस समय जो परिस्थितियां थीं उनमें उस विषाद की साक्षात् मूर्ति द्वारा बनाए गए चित्रों को देख मैं तो असह्य आतंक से त्रस्त हो जाता था। फ्यूसेली के चित्रों में भी दिवास्वप्नि-लता साकार हो उठती है; लेकिन अशर के चित्रों का जो प्रभाव पड़ता था वह फ्यूसेली के चित्रों से सैकड़ों गुना अधिक था।

अपने मित्र की विरा्‌ परन्तु भयंकर कल्पना का मैं एक उदा-हरण देता हूं, यद्यपि शब्दों में उसकी अभिव्यक्ति बड़ी ही निर्बल होगी। एक छोटे-से चित्र में एक लम्बी गुफा का एक भाग दिखलाया गया था। गुफा की छत काफी नीची थी। दीवारें चिकनी और सफेद थीं। चित्र में कुछ ऐसी चीज़ें दिखलाई गई थीं जिनसे प्रकट होता था कि गुफा का यह भाग ज़मीन से काफी नीचे है। गुफा काफी लम्बी-चौड़ी थी किन्तु उसमें से बाहर जाने का कोई रास्ता या दर-वाज़ा नहीं दिखलाया गया था। कहीं मशाल या रोशनी का कोई साधन चित्रित नहीं था। फिर भी सारी गुफा प्रकाश से जगमगा रही थी। यह प्रकाश बड़ा ही बेतुका और भयानक लगता था।

मैं अभी बतला चुका हूं कि मेरे मित्र के कानों की नसों में कुछ ऐसा दोष था कि वे तन्तु-वाद्यों के कुछ विशिष्ट स्वरों के अतिरिक्त अन्य कोई संगीत सहन ही नहीं कर सकते। अतएव उन स्वरों के सीमित क्षेत्र में ही वे अपने राग बांधते थे। नतीजा यह होता था कि उन रागों में एक अजीब-सी भयानकता, डरावनापन आ जाता था। लेकिन उसका कारण नहीं बतलाया जा सकता। यह डरावनापन तो स्वर और गीत दोनों में शब्दों में ही होता था। लेकिन ऐसा होता तभी था जब मानसिक कष्ट और परेशानी बहुत बढ़ जाती थीं। उन गीतों में से एक के शब्द भी मुझे याद हो गए हैं। ये गीत सुनकर मुझे उनकी रहस्यवादिता का तो ज्ञान होता ही था और

साथ ही ग्रशर की वास्तविक मानसिक स्थिति का भी भान हो जाता था। एक गीत था 'भुतहा महल' जिसके शब्द इस प्रकार थे :

हरी-भरी घाटी में मेरी, जहां देवदूतों का डेरा,
एक भव्य प्रासाद खड़ा था, शीश उठा सौन्दर्य घनेरा।
शासक के मन साम्राज्य में, रूप मनोहर, दिव्य बड़ा था,
धरती पर इससे ग्राधा भी, सुन्दर भवन, न ग्रौर खड़ा था।।
पीली झिलमिल स्वर्ण पताकाएं, उड़ती थीं गृह-शिखरों पर,
उस सुदूर प्राचीन काल में, जहां न पहुंचेंगे युग के कर।
मधुमय दिन थे, मन्थर-मन्थर, मन्द वायु विचरण करती थी
परकोटों पर पंख खोलकर सुखद गंध सांसें भरती थी।।
सुखमय घाटी में यात्री, देखा करते दो वातायन से,
तिरती वंशी की लहरों पर; ग्रात्माएं संगीत-चरण से।
सिंहासन के ग्रासपास, नव राजकुमार जहां शोभित था,
ग्रपने सारे सुख-वैभव में, शासक गौरवपूर्ण निहित था।।
हीरे-मोती से विजड़ित, ग्राभामय वह प्रासाद द्वार था,
जिससे लहर-लहर लहराता, ग्राता वह संगीत ज्वार था।
उन प्रतिध्वनियों का जिसमें, केवल मादक संगीत मुखर थे,
रूप विमोहक स्वर, शासक का बुद्धि-ज्ञान शोभित ग्रंतर था।।
ग्रब मंडराती हैं प्रेतात्माएं, काले वस्त्रों में भू-पर,
(शोकमग्न हों, क्योंकि खड़ा है ग्रब फन फैलाकर विषधर।)
उसके घर की खिली लजीली, गौरव छवि ग्रब बुझी पड़ी है,
काल-गर्भ में दफ़न किसी विस्मृत गाथा सी किन्तु गड़ी है।।
लोहित ग्राकाशिका खुली, ग्रब शून्य दृष्टियां विचर रही हैं,
महाकाय छायाएं विस्वर राग, गर्त में उतर रही हैं।
लगता कोई नदी भयावह भीत द्वार से उमड़ चली है,
ग्रट्टहास करती कुरूपता मधु-स्मिति कलिका उजड़ चली है।।[1]

१. इस काव्यांश का ग्रनुवाद श्री सर्वेश्वरदयाल सक्सेना ने किया है, जिसके लिए कथानुवादक उनका ग्राभारी है।

मुझे भलीभांति याद है, इस गीति-कथा से हमारे मस्तिष्क में कैसा द्वन्द्व खड़ा होता था। इसी विचार-शृंखला के मध्य ग्रशर का एक ग्रौर मत मुझे ज्ञात हुग्रा। इस मत की चर्चा मैं इसलिए नहीं कर रहा कि उसमें कुछ नूतनता है (भले ही कुछ लोग ऐसा ही समझते हों) बल्कि इसलिए कर रहा हूं कि ग्रशर ग्रपने मत पर कितना दृढ़ था। यह मत समस्त वनस्पति सम्बन्धी दृश्यों के सम्बन्ध में था। लेकिन ग्रपनी मानसिक ग्रस्वस्थता के कारण ग्रशर के इस मत में बड़ी विकृति ग्रा गई थी। ग्रौर वे विशिष्ट मानसिक स्थिति में वनस्पति सम्बन्धी ग्रपना मत ग्रचेतन जगत् पर भी लागू करने लगे थे। मैं इस विकृति का शब्दों में पूरा वर्णन नहीं कर सकता। यह विश्वास (जैसा मैं पहले संकेत कर चुका हूं) उनके पूर्वजों की हवेली के पत्थरों के सम्बन्ध में था। ग्रशर का ख्याल था कि हवेली के पत्थर इस प्रकार लगाए गए हैं कि उनमें वह वनस्पति उग ग्राए जो दीवारों पर जम गई थी। वे उन सूखे पेड़ों को भी नहीं छेड़ना चाहते थे जो हवेली के चारों तरफ थे। यही नहीं, दीर्घ काल से चली ग्राई इस दृश्य-व्यवस्था में भी वे कोई परिवर्तन नहीं चाहते थे, जिसकी प्रतिछवि साथ वाले ताल के जल में सदैव पड़ा करती थी। उनका कहना था कि जल ग्रौर दीवारों की वह विशिष्ट स्थिति विशेष प्रकार के वातावरण को जन्म देती है। वातावरण की स्थिरता ही उनके विश्वास का प्रमाण है। उन्होंने मुझे बतलाया था कि शताब्दियों से उनके परिवार का भाग्य निर्णय करने में वातावरण की शान्ति ग्रौर साथ ही उसके भयावह प्रभाव का बड़ा हाथ रहा है। यह उसी प्रभाव का परिणाम था, जो ग्राज यह इस ग्रवस्था में हैं। इस प्रकार के मत पर क्या टिप्पणी की जा सकती है? ग्रौर मैंने कोई टिप्पणी की भी नहीं।

हमारी पुस्तकें भी इसी त्रासदायी विश्वास के ग्रनुरूप थीं। परिवार के रोगियों के मानसिक ग्रस्तित्व में इन पुस्तकों का बड़ा हाथ था। हम दोनों ने साथ-साथ बैठकर ग्रेसे की 'वरवर्त एट

चार्यूंज' नाम की पुस्तक पढ़ी थी। मैकियावली की 'बेलफेगोर' पढ़ी थी। स्वीडनबर्ग की 'हेवन एण्ड हैल,' हाल बर्ग की 'सबटेरेनियन वायेज आव निकोलस क्लिम,' राबर्ट फ्लड की 'कीरोमेंसी,' टिक की 'जर्नी इन्टू दि ब्लू' और कैम्पानेसा की 'दी सिटी आफ दी सन' आदि पुस्तकें पढ़ी थीं। हम डोमीनीकन इमेरिक डी जिरौने लिखित 'डारेक्टोरियम इन्क्विजिटोरम' बड़े चाव से पढ़ते थे। अफ्रीकी देवी-देवताओं (और एजीपनों) के सम्बन्ध में 'पम्पोनियस मेला' में कई मनोरंजक प्रसंग थे जिनको पढ़ते-पढ़ते अशर घण्टों के लिए विचारमग्न हो जाता था। किन्तु उससे भी अधिक उसे रुचि थी एक प्राचीन पुस्तक में। वह पुराने ढंग से छपी थी और किसी भूले-बिसरे गिर्जा की नियम-संहिता थी, उसका बड़ा-सा लैटिन नाम था।

इस पुस्तक में कर्मकाण्डी कृत्यों के विस्तृत नियम दिए हुए थे। मैं इन नियमों को पढ़कर बहुधा सोचता था कि मेरे मित्र पर इस पुस्तक के स्वाध्याय की प्रतिक्रिया हुई होगी। ऐसी ही कुछ बात मैं एक दिन बैठा-बैठा सोच रहा था कि संध्या को सहसा मुझे मेरे मित्र ने आकर सूचना दी कि लेडी मेडलीन नहीं रहीं। उसने यह भी कहा कि दफनाए जाने के पूर्व, वह अपनी बहन के शव को लगभग एक पखवारे के लिए हवेली की भूमिगत कोठरी में रखना चाहता है। इसका जो कारण उन्होंने बतलाया, वह इतना निराला था कि उसके सम्बन्ध में मैंने कोई विवाद करना उचित नहीं समझा। उसने अपने इस निश्चय के कई कारण बताए। पहला यह कि रोगी की व्याधि बड़ी असाधारण थी। दूसरे उसकी बहन के चिकित्सक बहुत खोद-खोदकर मौत का कारण पूछेंगे और तीसरे उनकी पारिवारिक कब्र-गाह बहुत दूर और खुली हुई है। मैं अभी उस चेहरे को भूला नहीं था जो मुझे अपने आने के दिन दिखलाई पड़ा था। चिकित्सक के चेहरे पर खेल रही कुटिलता मुझे याद थी। मैंने अपने मित्र के सुझाव को मान लिया। कारण, सुझाव को अधिक साव-धानी की संज्ञा दी जा सकती थी। इसमें कुछ अस्वाभाविकता भी

नहीं थी और कम से कम किसी नुकसान की तो कोई संभावना थी ही नहीं।

अस्थायी रूप से लाश को दफनाने के कार्य में मैंने भी, अशर के अनुरोध पर उसका हाथ बंटाया। कफन वाले बक्स में शव को रखकर हम दोनों उसे अकेले ही उठाकर उस भूमिगत कोठरी में ले गए। जिस ज़मींदोज़ कोठरी में हम शव वाला बक्स लेकर गए वह छोटी, नम और अंधेरी थी। इसमें उजाला आने का कोई रास्ता नहीं था और यह कोठरी बहुत दिनों से खोली भी नहीं गई थी। हमारी मशालें कोठरी में आधी बुझी-सी जा रही थीं। इनकी रोशनी में मैं कोठरी को भलीभांति देख भी नहीं पाया। यह काल-कोठरी ज़मीन में बहुत नीचे जाकर थी। मेरा सोने का कमरा इस कोठरी के ठीक ऊपर था। पुराने सामन्ती ज़माने में इसमें शायद कैदी रखे जाते थे। बाद में शायद इसमें बारूद या ऐसी ही कोई प्रदाहक वस्तु रखी जाने लगी थी, क्योंकि कोठरी के कुछ भाग में और उस चक्करदार गुफा जैसे रास्ते के अन्दर के भाग में, जिससे होकर हम लोग आए थे, तांबे का पत्तर जड़ा था। लोहे के भारी दरवाज़ों पर भी तांबा चढ़ा था। जब हमने दरवाज़ा खोला तो उसकी चूलों से भारीपन के कारण बड़े ज़ोर से 'चीं चीं' की आवाज़ आई।

अपने शोकपूर्ण बोझ को उस भयानक स्थान पर रखने के बाद हमने बक्स का खुला ढक्कन ऊपर उठाकर उसमें रखे शव को देखा। मैंने चेहरे पर नज़र डाली। सबसे पहली बात जिसने मेरा ध्यान आकृष्ट किया, वह थी भाई-बहन की सूरत की समानता। संभवतया अशर ने मेरे मन के भाव को समझ लिया। उसके होंठों से बुदबुदाते हुए कुछ शब्द निकले। इन शब्दों का पूरा अर्थ तो मैं नहीं समझा लेकिन जो समझा उसका भाव यह था—वे दोनों जुड़वां भाई-बहन थे और यही कारण था कि दोनों को एक दूसरे से अत्यधिक स्नेह था। बहुत अधिक देर तक हम लाश की तरफ देख न सके, क्योंकि हम स्वयं कुछ-कुछ डर से रहे थे। युवावस्था में ही जिस व्याधि ने

लेडी मेडलीन के प्राण ले लिए थे, वह व्याधि भी हर रोग की भांति, मौत के बाद अब उनको छोड़ गई थी। गालों पर अब भी बहुत हलकी रक्तिमता थी। होंठों को देखकर ऐसा संदेह होता था कि लेडी मेडलीन मुसकरा रही है। मौत हो जाने के बाद यह सब बड़ा ही भयानक लग रहा था। हमने कफन का ढक्कन बंद करके उसकी सांकल लगा दी। इसके बाद लोहे का दरवाजा बंद कर बड़ी कठिनाई से हवेली के ऊपर वाले कमरों में आए, जहां विषाद का वातावरण नीचे वाली काल-कोठरी से कहीं कम था।

असीम दुःख के कुछ दिन बीत जाने के बाद मैंने अपने मित्र की विक्षिप्त अवस्था में विचित्र परिवर्तन देखा। उनका सामान्य स्वभाव लुप्त हो गया था। दैनिक या नित्य-नैमित्तिक कार्यों को या तो वे भूल जाते थे या उनकी उपेक्षा करते थे। वे इधर से उधर, एक कमरे से दूसरे कमरे में, बेमतलब दौड़ने लगते थे। त्वचा का वर्ण पहले से भी अधिक पीला पड़ गया था—इतना पीला कि चेहरा देखते डर लगता था। लेकिन आंखों की स्वाभाविक चमक गायब हो गई थी। कण्ठस्वर में गम्भीरता ज़रा भी नहीं रह गई। जब भी वे बोलते थे तो उनकी आवाज़ से ऐसा लगता कि वे डर के मारे कांप रहे हैं। अनेक बार मुझे ऐसा लगा कि वे किसी भेद की बात बतलाना चाहते हैं और उसे बताने के लिए अपेक्षित साहस संचित कर रहे हैं। बाद में, मैं अनुभव करता कि नहीं, यह सब पागलपन के अलावा और कुछ नहीं है। मैंने उन्हें देखा कि वे घण्टों किसी ओर मुंह करके उस दिशा में आंखें गड़ाए इस प्रकार बैठे रहते जैसे उन्हें कोई आवाज़ सुनाई पड़ रही हो। कोई आश्चर्य नहीं कि उनकी यह भयानक दशा देख, मेरे ऊपर भी उसका असर पड़ने लगा हो। मुझे ऐसा लगने लगा था कि उनके विचित्र विश्वासों की प्रतिक्रिया मेरे मस्तिष्क पर भी पड़नी आरम्भ हो गई है।

लेडी मेडलीन को नीचे की काल-कोठरी में सुलाए कोई सात-आठ दिन हो गए थे। उस दिन रात को जब मैं सोने लगा तो मैंने वह

प्रतिक्रिया तीव्रता से अनुभव की, जिसकी चर्चा अभी-अभी मैंने ऊपर की पंक्तियों में की है। घण्टों पर घण्टे बीतते चले गए, नींद आना तो दूर, पास फटकी भी नहीं। मैं अपनी घबराहट को बुद्धि-विवेक द्वारा भगाने की चेष्टा करता रहा। लेकिन इस संघर्ष का कोई फल न हुआ। मैंने अपने आपको यह कहकर समझाने का प्रयत्न किया कि मुझे भय लगने का यदि कुल नहीं तो एक कारण कमरे का विषादमय वातावरण भी हो सकता था, जो इस तमाम फर्नीचर की वजह से बन गया है। काले परदों की वजह से भी मुझे परेशानी हो रही होगी, क्योंकि बाहर उठ रहे तूफान के पहले आने वाली हवा के कारण परदे बहुत उड़ रहे थे और बार-बार मेरे बिस्तर को छू रहे थे। परन्तु मेरे सारे प्रयत्न असफल रहे। क्रमशः मैं अनुभव कर रहा था कि मेरा शरीर बराबर कांप रहा है। अन्ततः मेरे हृदय में ऐसा डर समा रहा कि जिसका मेरी समझ में कोई कारण नहीं था। इस भय से मुक्त होने का मैंने अनेक बार प्रयत्न किया। मैं उठकर तकियों पर बैठ गया। कमरे में घुप अंधेरा छाया था। मैंने अंधेरे में आंख गड़ाकर जो आवाज़ें आ रही थीं, उन्हें सुनने की कोशिश की। बाहर तूफान हुंकार रहा था। बीच-बीच में थोड़ी-सी देर के लिए तूफान रुक जाता था और इस मध्यान्तर में काफी-काफी देर बाद कोई अनिश्चित और धीमी आवाज़ आ रही थी। कहां से आ रही थी—यह मैं नहीं जानता। इस अकारण भय से तंग आकर मैंने बिस्तर छोड़ दिया और उठकर कपड़े पहन (मैंने सोच लिया था रात भर मैं सोऊंगा नहीं) लिए। इसके बाद मैं कमरे में अपनी दशा पर तरस खाते हुए, इधर से उधर जल्दी-जल्दी टहलने लगा। मैं चाह रहा था कि भय की यह अवस्था जितनी जल्दी समाप्त हो जाए, अच्छा है।

मैं कुछ ही मिनट इस प्रकार घूमा था कि मेरा ध्यान कमरे की सीढ़ी से आने वाली रोशनी की ओर आकृष्ट हुआ और मैंने उसी प्रकाश में देखा कि अशर चला आ रहा है। एक क्षण बाद ही उसने मेरा दरवाज़ा थपथपाया और लालटेन लिए मेरे कमरे में घुस आया।

उसका चेहरा पहले की तरह पीला था। लेकिन उसके अलावा उसकी आंखों में पागलों जैसी खुशी चमक रही थी। उसका सारा रंग-ढंग ऐसा था जिससे लगता था कि वह दौरे की प्रारम्भिक दशा में है। मैं उसकी यह दशा देख चकरा गया लेकिन मैं उस समय एकान्त से घबरा गया था और अशर की उपस्थिति से मुझे राहत मिली।

अकस्मात् उसने मुझसे पूछा, "और तुमने नहीं देखा?—अच्छा रुको! तुम भी देखो।" यह कहता हुआ वह तेजी से खिड़की की तरफ चला गया और खिड़की खोलकर लालटेन बाहर कर दी।

बाहर से आने वाली तूफानी हवा के रोष ने मुझे अपने आसन से एकदम खड़ा हो जाने को बाध्य कर दिया। रात तूफानी थी, लेकिन बड़ी सुन्दर लग रही थी। तूफान की तेजी देखकर भय लगता था किन्तु रात्रि की सुन्दरता भी अवर्णनीय थी। हमारे घर के पास तूफान का भंवर बन गया था इसलिए वायु की दिशा बड़ी जल्दी-जल्दी बदल रही थी। बादल बहुत नीचे आ गए थे और छज्जों को छू रहे थे। वे बादल तेज़ हवा में इधर से उधर भाग रहे थे और तूफान की तीव्र गति देखने में कोई बाधा नहीं पड़ रही थी। चन्द्रमा या तारे हमें बिलकुल नहीं दिखलाई पड़ रहे थे। बिजली भी कौंधती नहीं दिखलाई पड़ रही थी। लेकिन फिर भी बादलों की वह सतह जो भूमि की तरफ थी और आसपास की सारी चीज़ें एक प्रकार के बिलकुल अस्वाभाविक प्रकाश में चमक रही थीं।

"यह सब तुम बिलकुल मत देखो।" मैंने घबड़ाते हुए अशर से कहा और उसे खींचकर खिड़की से कुर्सी पर हलका-सा बल प्रयोग करते हुए ले आया। "ये दृश्य," मैंने कहा "विद्युतजन्य हैं या संभव हैं कि ताल के पानी की चमक के कारण दिखलाई पड़ रहे हों। इनमें कोई खास बात नहीं है। हमें यह खिड़की बन्द कर देनी चाहिए। हवा बड़ी ठंडी है और यह तुम्हें नुकसान पहुंचा सकती है। देखो, तुम्हारी रुचि की यह पुस्तक है। मैं इसे पढ़ता हूं—सुनो। इस तरह हम दोनों यह डरावनी रात बिता लेंगे।"

जो मोटी-सी पुस्तक मैंने उठाई थी, वह सर लान्सीलाट कैनिंग की 'मेडट्रिस्ट' थी। मैंने इसे अशर की प्रिय पुस्तक प्रसन्न भाव से विनोद में नहीं बतलाया था अपितु उदास भाव से बताया था। सचाई यह थी कि उस पुस्तक में जो कल्पनाहीन कथा थी वह अशर की आध्यात्मिक और ऊंची कल्पना की तुलना में बौनी थी। लेकिन उस समय यही किताब सामने थी। और मुझे क्षीण-सी आशा थी कि इसमें लिखी बेवकूफी की बातों से ही शायद इस विक्षिप्त व्यक्ति को कुछ आराम मिले। यदि मैंने उसके चेहरे पर अंकित प्रसन्नता के भाव भी देख लिए होते, जो मेरे कहानी पढ़ने से अशर के मुंह पर अंकित हो गए थे, तो मुझे अपने आपको इस योजना पर बधाई भी दे देनी चाहिए थी।

मैं कथा के उस प्रसिद्ध भाग को पढ़ रहा था, जहां नायक इथलरेड पहले तो संन्यासी की कुटिया में शान्तिपूर्वक प्रवेश चाहता है, लेकिन जब वह इसमें असफल होता है, तो बलात् घुस जाता है। यहां कथा के शब्द इस प्रकार हैं:

'और इथलरेड, जो पहले ही वज्र सदृश कठोर हृदय का व्यक्ति था, उस समय मद्यपान के कारण और शक्तिशाली हो गया था। उसने संन्यासी से अधिक बात नहीं की। संन्यासी कुटिया में आराम से हठपूर्वक कुटिलता से बैठा था। अपने को भीगता देख और तूफान के बढ़ने की आशंका से भयभीत हो इथलरेड ने अपने हाथ का छोटा-सा डंडा उठाकर लकड़ी के दरवाज़े पर प्रहार करना शुरू कर दिया। थोड़ी देर में दरवाज़े में छेद हो गए। उसने कुछ ही देर में अपनी शक्ति का प्रयोग कर दरवाज़े को हाथ से ही तोड़ डाला। दरवाज़े के टूटने की आवाज़ सारे जंगल में प्रतिध्वनित हो उठी।'

इस वाक्य के समाप्त होने और दूसरा वाक्य आरम्भ करने के पूर्व मैं कुछ देर के लिए रुका। इसी बीच मुझे हवेली के किसी दूरस्थ भाग में दरवाज़ों के चटखने और उसके टूटने की प्रतिध्वनि सुनाई दी। (हालांकि मैं समझ गया कि मुझे धोखा हुआ है)—वही प्रतिध्वनि

जिसे सर लान्सीलाट ने इतनी विशेषता से वर्णित किया था। मैं समझ गया कि बाहर से जो ग्रावाज़ मुझे सुनाई दी है, वह खिड़कियों के दरवाज़ों के बंद होने ग्रौर खुलने से ग्रौर बाहर चलने वाले तेज़ तूफान की मिश्रित ध्वनियों के संयोग से ही हुई है। मुझे न तो उससे परेशान होने की ग्रावश्यकता ही है ग्रौर न कोई बहुत ध्यान देने की ज़रूरत है। मैंने अपनी कहानी पढ़ना जारी रखा।

'लेकिन वीर इथलरेड को यह देखकर बड़ा क्रोध ग्राया ग्रौर साथ ही ग्राश्चर्य भी हुग्रा कि वहां उस कुटिल संन्यासी का नामनिशान भी नहीं था। उस साधू के बजाय वहां एक बहुत बड़ा राक्षस जीभ लपलपाता हुग्रा रक्षक की भांति खड़ा था। उस राक्षस के पीछे सोने का महल था। चांदी का फर्श था। दीवार पर पीतल की पाटी लगी थी जिसपर ये शब्द ग्रंकित थे—'जिस व्यक्ति ने यहां प्रवेश किया है, वह विजेता है। ग्रौर जो इस राक्षस को मार डालेगा, वह पदक का ग्रधिकारी होगा।''

'इथलरेड ने ग्राव देखा न ताव ग्रौर चट से ग्रपना लोहे का डंडा राक्षस के सिर पर दे मारा। डंडे के पड़ते ही राक्षस का दम छूट गया। मरने के पहले राक्षस चांदी के फर्श पर गिर गया। उसके गिरने की ग्रौर मरने के पहले उसकी चीख की ऐसी तीखी ग्रौर डरावनी ग्रावाज़ें निकलीं कि शोर से घबराकर इथलरेड ने ग्रपने कान बन्द कर लिए। ऐसी ग्रावाज़ पहले कभी नहीं सुनी गई थी।'

सहसा, यहां फिर कुछ देर के लिए मैं रुका। इस बार ग्रसंदिग्धतः मैंने किसी के गिरने ग्रौर चिल्लाने की ग्रावाज़ें सुनी थीं। ये ग्रावाज़ें कहीं दूर से ग्रा रही थीं (मैं दिशा नहीं बतला सकता कि वे ग्रावाज़ें किधर से ग्रा रही थीं) मुझे ऐसा लगा कि ये चीखें उसी राक्षस की हैं। यह सब सुनकर मैं बहुत ही चकराया।

निश्चय ही दूसरी बार की प्रतिध्वनि से मैं बहुत घबरा गया। मुझे हज़ारों प्रकार की ग्रनुभूतियां हो रही थीं। इनमें ग्राश्चर्य ग्रौर ग्रातंक का भाव ही सबसे ग्रधिक था। फिर भी मैं इतना ग्रधिक नहीं

घबड़ा गया था कि मेरे हृदय का भाव बाहर प्रकट हो जाता ग्रौर उसका ग्रसर मेरे रुग्ण मित्र पर होता। मुझे यह भी निश्चय नहीं था कि जो ग्रावाज़ें मैंने सुनी हैं, वह वस्तुतः मेरे मित्र ने भी सुनी हैं या नहीं। हालांकि उसके ग्राचरण में पिछले कुछ मिनटों में ग्रद्भुत परिवर्तन हो गया था। पहले वह ग्रपनी कुर्सी का मुंह मेरी तरफ किए बैठा था लेकिन पता नहीं कब मुड़कर उसने ग्रपनी पीठ मेरी तरफ कर ली थी, ग्रौर मुंह दरवाज़े की तरफ। उसका परिणाम यह हुग्रा था कि उसके चेहरे के भावों को मैं ग्रंशतः ही देख सकता था। मैंने तभी देखा कि वह कुछ बुदबुदाया। मुंह से क्या शब्द निकले यह मैं नहीं जानता। उसका सिर लुढ़ककर छाती पर गिर गया था। मुझे उसका चेहरा जितना कुछ दिखलाई पड़ रहा था उससे लगा कि वह सो नहीं रहा है, क्योंकि उसकी ग्रांखें बिलकुल खुली हुई थीं। दूसरे वह एक ग्रोर से दूसरी ग्रोर बराबर हिल रहा था। उसका हिलने का क्रम मंद ग्रौर सम था। इतना देखने के बाद मैंने फिर सर लान्सीलाट की कहानी पढ़नी शुरू की।

'ग्रौर इस प्रकार नायक जब राक्षस के भयावह क्रोध से बच गया ग्रौर ग्रपने ग्रापको विजयी समझ वह सोचने लगा कि ग्रब महल का जादू खत्म हो गया है, तब उसने राक्षस की लाश को ग्रपने रास्ते से खींचकर हटा दिया। इसके बाद वह महल के चांदी के फर्श पर चलता हुग्रा उस पट्टी के पास पहुंचा जिसपर ये शब्द ग्रंकित थे जिनका हम ऊपर ज़िक्र कर ग्राए हैं। लेकिन उसके पास पहुंचने के पूर्व ही वह पट्टी चांदी के फर्श पर झनझनाती हुई भयंकर ग्रावाज़ के साथ गिर गई।'

मेरे मुंह से इन शब्दों का निकलना था कि मुझे झनझनाती हुई किसी धातु की चीज़ के फर्श पर गिरने की ग्रावाज़ सुनाई दी। ग्रावाज़ बड़ी रुंधी ग्रौर दबी थी। मैं एकदम घबरा गया ग्रौर कूदकर खड़ा हो गया। लेकिन ग्रशर ठीक उसी तरह हिलता रहा जिस तरह पहले हिल रहा था। मैं उस कुर्सी की तरफ भागा जहां वह

बैठा था। उसकी आंखें और मुखमुद्रा पथरा गई थीं। लेकिन जैसे ही मैंने उसके कंधे पर हाथ रखा उसका सारा शरीर एक साथ कांप उठा। होंठों पर हलकी-सी मुसकराहट आ गई। मैंने देखा, वह मन्द स्वर में तेजी के साथ अस्पष्ट ढंग से कुछ बड़बड़ा रहा है। ऐसा लग रहा था कि उसे मेरी उपस्थिति का ज्ञान है।

'नहीं सुन रहे हो क्या?—हां, मैं तो सुन रहा हूं और मैंने सुना भी है। मैंने मिनट-मिनट, घण्टे-घण्टे और दिनों तक वह आवाज़ें सुनी हैं। फिर भी मेरा साहस नहीं होता—और, मेरी इस हालत पर तो तरस खाओ—मैं बोलने की, अपनी ज़बान खोलने की भी हिम्मत नहीं कर सकता। हम लोगों ने उसे ज़िन्दा दफना दिया है। मैंने नहीं कहा था कि मेरी हालत बहुत खराब है? अब मैं तुम्हें बताता हूं कि मैंने लाश वाले बक्स में ही सबसे पहले उसका हिलना-डुलना देख लिया था। मैंने कई दिन पहले यह बात जान ली थी, फिर भी मुझे साहस नहीं हुआ कि मैं तुम्हें बतला दूं। और अब, आज रात इथलरेड—हा! हा! हा—संन्यासी की कुटिया का दरवाज़ा टूटना, राक्षस की दम टूटते-टूटते निकली चीख, और पट्टी के झनझनाकर गिरने की आवाज़!—नहीं नहीं! ये उसकी लाश वाले सन्दूक के खुलने, लोहे का दरवाज़ा खुलने और तांबे की अंधेरी गुफा से निकलने के प्रयत्न थे! ओह अब मैं कहां भागूं? क्या वह अब यहां नहीं आ जाएगी? मैंने जो जल्दबाज़ी की, उसकी सज़ा क्या अब मुझे नहीं मिलेगी? क्या मैं उसी के कदमों की आवाज़ सीढ़ियों पर नहीं सुन रहा? और क्या मुझे उसकी भारी-भारी सांसों की आवाज़ नहीं सुनाई पड़ रही है?'

"पागल" ज़ोर से चिल्लाकर वह अपनी जगह से एकदम उठकर खड़ा हो गया और चीख रहा था, "पागल! मैं कहता हूं वह कमरे के अन्दर आ गई है।" इसके बाद वह निढाल हो गिर पड़ा। मुझे लगा उसका दम निकल गया।

जैसे कोई अलौकिक शक्ति वहां हो—ठीक उसी तरह अशर के

दरवाज़ों की ओर इंगित करते ही कमरे के भारी-भारी दरवाज़े ज़ोरों के साथ बिलकुल खुल गए। ऐसे ही जैसे किसी के बड़े-बड़े जबड़े खुल गए हों। हो सकता है तेज़ हवा के कारण ऐसा हुआ हो—लेकिन उससे क्या? वस्त्रों में लिपटी और लम्बे कद की लेडी मेडलीन आव अशर वहां खड़ी थीं। उनके सफेद वस्त्र कई जगह रक्त से लथ-पथ थे और उनके निर्बल शरीर के अंग-अंग से यह प्रकट हो रहा था कि वे बहुत कठोर संघर्ष करके आई हैं। एक क्षण के लिए वे देहरी पर ही इधर से उधर और उधर से इधर कांपती हुई घूमती रहीं। इसके बाद सिसकती और रोती हुई अपने भाई के शरीर पर आकर गिर गईं। वे भी अपनी सांस तोड़ रही थीं। भाई का शव भी कुर्सी से फर्श पर आ गिरा था। अशर जिस आशंका और भय से त्रस्त था, अन्त में वह उन्हीं का शिकार हो गया।

मेरे होश फाख्ता हो गए थे। मैं कमरे से और फिर उस हवेली से सिर पर पांव रखकर भागा। जब मैं उस छोटी-सी पगडण्डी पर भागा चला जा रहा था, तब भी बाहर भयानक तूफान चल रहा था। सहसा मुझे लगा पीछे से तेज़ रोशनी आ रही है। मेरे पीछे हवेली और उसकी लम्बी छाया थी। पीछे मुड़कर देखा तो चन्द्रमा चमक रहा था। उसका वर्ण लाल था और वह अस्तायमान था। चांदनी में मुझे हवेली की वह दरार दिखलाई पड़ी जो छत से शुरू होकर टेढ़ी-मेढ़ी दौड़ती हुई बगल की दीवार से ताल में जा मिली थी। इस दरार की चर्चा मैं पहले भी कर चुका हूं। मैं उसे देख ही रहा था कि वह दरार चौड़ी होती चली गई। उसी समय भंवर जैसा तूफानी झोंका आया। उसके एक ही धक्के में सारी हवेली ढह गई। इस दृश्य को देख मैं अचेत हो गया। लेकिन अचेत होते-होते मेरे कानों में एक साथ बहुत-सा जल चढ़ आने की झनक पड़ी और पलक मारते ही ताल का कालिमापूर्ण जल हवेली पर चढ़ गया और हवेली के ध्वंसावशेष उसमें डूब गए।

५ | सुनहला खटमल

कई वर्ष पूर्व मि० विलियम लेग्राण्ड से मेरी घनिष्ठ मित्रता हो गई थी। वे ह्यूगनॉट घराने के वंशज थे। वे बड़े धनाढ्य थे। परन्तु प्रारब्ध-चक्र की प्रतिकूलता के कारण वे निर्धन हो गए थे। निर्धनता-जन्य लज्जा से बचने के लिए उन्होंने अपने बाप-दादों के नगर न्यू-ओर्लियन्स को छोड़ दिया था, और चार्ल्सटन के समीप दक्षिण-केरोलिना (राज्य) में सुलिवन द्वीप में जाकर रहने लगे थे।

यह द्वीप भी अपने ढंग का निराला ही है। कोई तीन मील लम्बे इस द्वीप में समुद्री रेत के अलावा कुछ नहीं है। किसी भी जगह द्वीप चौथाई मील से अधिक चौड़ा नहीं है। राज्य का मुख्य स्थल-भाग और द्वीप पतले जल-मार्ग द्वारा अलग है। यह जलधारा पंकिल और जंगली प्रदेश से होकर बहती है। यहां मुर्गाबियां बहुत हैं। जलधारा के आसपास दोनों ओर घासपात करीब-करीब नहीं के बराबर है और जो है वह भी बहुत छोटी-छोटी। पेड़ तो बिलकुल नहीं हैं। द्वीप के पश्चिमी छोर पर फोर्ट (किला) मौल्ट्री है। इसी के आस-पास कुटियों जैसे कुछ टूटे-फूटे मकान हैं। गर्मियों में चार्ल्सटन की धूल और ज्वर से घबड़ाकर जब लोग यहां भाग आते हैं तो ये किराए पर उठ जाते हैं। लेकिन इसके अलावा सारे समुद्र-तट पर सफेद रेत दिखाई देती है, जो कहीं-कहीं पर एक प्रकार के मेंहदी के पेड़ों से ढंकी रहती है। यह घास इंगलेंड के उद्यान-विशारदों को बड़ी प्रिय है। ये पौधे ज्यादातर पन्द्रह या बीस फुट तक ऊंचे होते हैं और इनमें से होकर किसी का भी गुज़रना असम्भव है। इन पौधों के आसपास का वातावरण इनकी खुशबू से भरा रहता है।

इन्हीं झाड़ियों से घिरे, द्वीप के पूर्वी छोर पर लेग्राण्ड ने अपने

रहने के लिए छोटी-सी कुटिया बना ली थी। संयोगवश इसी कुटिया में मैं एक बार पहुंच गया था जहां लेग्राण्ड से मेरा प्रथम परिचय हुआ था। शीघ्र ही यह परिचय मित्रता में बदल गया। इस एकान्त में एक दूसरे की रुचि की बातें करने का पर्याप्त अवसर मिलता था जिनके कारण एक दूसरे के प्रति पारस्परिक आदर का भाव बढ़ता ही गया। लेग्राण्ड बड़ा शिक्षित था और उसकी मानसिक शक्तियां बड़ी असाधारण थीं। परन्तु उसे लोगों से मिलना-जुलना या उनमें उठना-बैठना बिलकुल पसन्द न था। कभी तो वह बड़ा उत्साहित दिखाई पड़ता था और कभी बड़ा सुस्त और उदास। लेग्राण्ड के पास अच्छा-खासा पुस्तकालय था किन्तु पुस्तकें वह शायद ही कभी पढ़ता हो। उसके मनोरंजन के मुख्य साधन थे चिड़ियों का शिकार करना, मछलियां पकड़ना, समुद्र-तट की रेत पर घूमना या तटवर्ती झाड़ियों में घुस जाना। इन भ्रमणों में वह नए-नए घोंघे या कीड़े-मकोड़ों के नमूने खोजता फिरता था। इस प्रकार घोंघों और कीड़े-मकोड़ों का जो संग्रह उसके पास था, वह इस विषय के किसी भी शौकीन आदमी के लिए ईर्ष्या की वस्तु था। इन सभी भ्रमणों में उनके साथ एक बूढ़ा नीग्रो भी रहता था। नीग्रो का नाम जुपिटर था। जुपिटर को उस समय नौकर रखा गया था जब लेग्राण्ड का परिवार निर्धन नहीं हुआ था। इसके बाद बूढ़े नीग्रो को बहुत समझाया-बुझाया गया, डराया-धमकाया भी गया, लेकिन उसने अपने स्वामी का साथ नहीं छोड़ा। अपने तरुण स्वामी मासा विल (मास्टर विल) की सेवा करने के अवसर को वह अपना अधिकार समझता था। सम्भवतः इस अधिकार की बात को ही जुपिटर के दिमाग में लेग्राण्ड के उन सम्बन्धियों ने और भी अधिक पुष्ट कर दिया था जो लेग्राण्ड को बड़ा चंचल समझते थे। उनका ख्याल था कि बूढ़ा नीग्रो नौकर घुमक्कड़ लेग्राण्ड की देखभाल और अभिभावकत्व भलीभांति कर सकेगा।

सुलीवन द्वीप में सर्दियों में बहुत ठंड नहीं पड़ती। पतझड़ के

मौसम में तो आग जलाकर घर को गरम करने की ज़रूरत ही नहीं पड़ती, लेकिन अक्तूबर १८—के मध्य में एक दिन कल्पनातीत ठंड पड़ी। सूर्यास्त के पूर्व हरी-भरी झाड़ियों से घिरे मार्ग से होता हुआ उस दिन मैं अपने मित्र के यहां पहुंचा। पिछले कई हफ्तों से मेरी और उसकी भेंट नहीं हुई थी। मैं उन दिनों द्वीप से नौ मील दूर चार्ल्सटन में रहता था। आजकल की तरह तब आने-जाने के साधन भी नहीं थे। अपनी आदत के अनुसार ठिकाने पर पहुंचकर मैंने कुटिया का दरवाज़ा थपथपाया। लेकिन मुझे कोई जवाब नहीं मिला। फलतः मैंने उस गुप्त स्थान को खोजा जहां चाबी छिपाकर रख दी जाती थी। वहां मुझे चाबी मिल गई और दरवाज़ा खोलकर मैं घर के अन्दर चला गया। अन्दर आतिशदान में खूब तेज़ आग जल रही थी। उस समय वह मुझे बड़ी सुखदायी लगी। मैंने अपना ओवरकोट उतार दिया, एक कुर्सी आग के पास खींच ली और अपने मेज़बान के लौटने की प्रतीक्षा करने लगा।

अंधेरा होने के कुछ देर बाद ही वे लोग आ गए। मुझे देख वे बड़े प्रसन्न हुए। मालिक और नौकर दोनों ने मेरा हार्दिक स्वागत किया। जुपिटर हंसता हुआ रात के भोजन के लिए मुर्गाबियां पकाने में जुट गया। लेग्राण्ड को उत्साह का दौरा (और क्या कहूं) आया हुआ था। उसने एक नए प्रकार का पौधा खोजा था। उससे भी अधिक बड़ी बात यह थी कि जुपिटर की सहायता से उसने एक नई किस्म के खटमल या कीड़े का शिकार किया था। लेग्राण्ड ने कहा कि इस कीड़े के विषय में वह मेरी राय कल मांगेगा।

मैंने अपने हाथ आग पर सेकते हुए पूछा, "और आज रात ही क्यों नहीं?" मन ही मन मैं खटमलों की सारी जाति को कोसता जा रहा था।

"हां! मुझे क्या मालूम था कि तुम यहां पर होगे।" लेग्राण्ड ने कहा, "तुमसे मिले बिना कितने दिन हो गए, और मैं यह कैसे जान लेता कि आज रात को ही तुम आओगे? घर आते हुए रास्ते में मेरी

मुलाकात किले वाले लेफ्टीनैन्ट जी० से हो गई और मैंने अपने बचपने में आकर देखने के लिए उन्हें दे दिया। इसलिए कल सुबह तक तुम उसे न देख सकोगे। आज रात यहीं ठहरो और कल सूर्योदय होते ही मैं जुपिटर को लेफ्टीनैन्ट के पास भेजकर वह कीड़ा मंगवा लूंगा। सृष्टि की वह सम्भवतः सबसे सुन्दर चीज़ है।"

"क्या?—सूर्योदय।"

"नहीं। खटमल जैसा वह कीड़ा—उसका रंग चमकीला सुनहला है। वह करीब-करीब कौड़ी जितना बड़ा है, और उसकी पीठ के दोनों छोरों पर दो काले धब्बे हैं। एक धब्बा कुछ छोटा है और दूसरा कुछ बड़ा और उसके सिर और मुंह के बीच दो बाल हैं…।"

"नहीं मासा विल! उसके बाल नहीं हैं," जुपिटर ने बात काटते हुए कहा, "वह कीड़ा सोने का है—अन्दर और बाहर दोनों तरफ ठोस सोने का; अपनी ज़िन्दगी में मैंने कभी इतना भारी कीड़ा नहीं देखा।"

"माना वह बहुत भारी है," लेग्राण्ड ने आवश्यकता से अधिक ज़ोर से बोलते हुए हमें उत्तर दिया, "लेकिन क्या इसी कारण तुम इन मुर्गाबियों को जलाए डालते हो?" इसके बाद मेरी ओर घूमकर लेग्राण्ड बोला, "उसका रंग इतना सुनहला है कि जुपिटर उसे सोने का कीड़ा मानता है। खटमल की पीठ ठीक उसी तरह चमकती है जिस तरह स्वर्ण, लेकिन जब तक तुम कल उसे देख न लो तब तक उसकी सही-सही कल्पना नहीं कर सकते। हां, इस बीच में तुम्हें यह दिखलाए देता हूं कि उसकी शक्ल कैसी है।" यह कहते हुए वह मेज़ पर बैठ गया। इस मेज़ पर कलम और दवात तो थी लेकिन कागज़ नहीं था। उसने मेज़ का दराज़ खोला लेकिन दराज़ में भी कोई कागज़ नहीं मिला।

अन्त में उसने कहा, "कोई बात नहीं है, इससे काम चल जाएगा।" और अपने वास्केट की जेब से उसने एक कागज़ खींच निकाला। यह कागज़ फुलस्केप के आकार का था और काफी गन्दा

था। इस कागज पर उसने एक चित्र बनाया। जब वह चित्र बना रहा था तो मैं अपनी कुर्सी पर बैठा हुआ आग सेक रहा था, क्योंकि मुझे इस समय भी बड़ी ठंड लग रही थी।

जब चित्र तैयार हो गया तो उसने वह कागज मुझे दे दिया। जैसे ही कागज मैंने हाथ में लिया कि बाहर दरवाजे पर गुर्राहट सुनाई दी और ऐसा लगा कि कोई दरवाजे को पंजे से खरोंच रहा है। जुपिटर ने दरवाजा खोल दिया। दरवाजा खोलते ही घने बालों वाला न्यू फाउण्डलैण्डियन कुत्ता अन्दर घुस आया। यह कुत्ता लेग्राण्ड का था। कमरे में घुसते ही वह मेरे कंधों पर चढ़ गया और मुझे चूमने लगा, कारण यह था कि मैं जब भी अपने मित्र के पास आता था तो उस कुत्ते को बड़ा प्यार करता था। जब कुत्ते का यह खेल खत्म हो गया तो मैंने चित्रवाला कागज देखा। कागज के ऊपर जो शक्ल बनी थी उसे देखकर मैं बड़ी उलझन में पड़ गया।

"अच्छा! यह तो बड़ा अजीब कीड़ा मालूम पड़ता है; बिलकुल नए किस्म का है। मैंने इस किस्म का कीड़ा पहले कभी नहीं देखा। इसकी शक्ल बिलकुल मुर्दे की खोपड़ी की तरह लगती है।" यह बात मैंने कुछ मिनट चित्र को भलीभांति देखने के बाद कही।

लेग्राण्ड ने प्रत्युत्तर देते हुए कहा, "मुर्दे की खोपड़ी की तरह! चित्र में तो निस्सन्देह वह ऐसा ही लगेगा। उसके काले धब्बे दोनों आंखों की तरह लगते हैं और जो निशान नीचे की तरफ है, वह मुंह की तरह लगता है और सारी शक्ल है भी तो अण्डेनुमा।"

"शायद ऐसा ही हो," मैंने कहा, "लेकिन लेग्राण्ड, तुम कोई चित्रकार तो हो नहीं। इसलिए यदि मुझे उस खटमल की आकृति के बारे में जानना है तो कल सुबह तक प्रतीक्षा करनी ही चाहिए।"

"ठीक है," कुछ परेशान होते हुए मेरे मित्र ने कहा, "वैसे मैं साधारणतः अच्छे चित्र बना लेता हूं। कम से कम ऐसे, जिनसे काम चल जाए। मेरे गुरु भी काफी योग्य थे और उन्हीं से मैंने चित्रकारी सीखी है; मैं समझता हूं कि मैं स्वयं भी बिलकुल बुद्धू तो नहीं हूं।"

न

"लेकिन मेरे मित्र, तुम फिर मजाक कर रहे हो," मैंने कहा, "यह तो खोपड़ी की ही शक्ल है, और काफी अच्छी है, कम से कम इसमें वे सारी बातें हैं जो शरीर विज्ञान सम्बन्धी सामान्य धारणाओं के अनुसार खोपड़ी में होनी चाहिएं—और अगर तुम्हारा खटमल इस शक्ल से मिलता-जुलता है तो वह दुनिया का सबसे अजीब कीड़ा है। तुम इस कीड़े को कोई विशेष नाम भी दे सकते हो। और हां, वे मुंह के पास वाले बाल कहां हैं, जिनके बारे में तुम कह रहे थे?"

"बाल!" लेग्राण्ड ने पता नहीं क्यों बहुत गर्मी दिखाते हुए कहा, "तुम्हें वे बाल जरूर दिखलाई देने चाहिएं। मैंने चित्र में उन बालों को बनाया है, ठीक उसी तरह जैसे वे कीड़े में हैं, और मैं समझता हूं कि इतना काफी है।"

"ठीक, ठीक!" मैंने कहा, "तुमने चित्र में वे बाल बनाए हैं, लेकिन मुझे वे दिखलाई नहीं पड़े।" यह कहने के बाद मैंने वह कागज बिना और अधिक कुछ कहे लेग्राण्ड को वापस कर दिया। मैं लेग्राण्ड के स्वभाव से परिचित था इसलिए उससे छेड़छाड़ नहीं करना चाहता था। लेकिन वातावरण में जो माधुर्यहीनता आ गई थी, उससे मुझे आश्चर्य हो रहा था। मैं लेग्राण्ड की नाराजगी से भी परेशानी में पड़ गया था। चित्र में कीड़े के बाल कहीं भी दिखलाई नहीं पड़ रहे थे। सारा चित्र मुर्दे की खोपड़ी की तरह दिखलाई देता था।

सरोष भाव से कागज लेग्राण्ड ने मेरे हाथ से लिया और वह उसे मोड़-तोड़कर आग में फेंक ही देना चाहता था कि उसने एक हलकी-सी नजर चित्र पर डाली। अकस्मात् वह उस चित्र को गौर से देखने लगा। क्षण भर में ही उसका चेहरा लाल हो गया, और क्षण भर बाद पीला। कुछ मिनट तक वह अपनी जगह पर ही बैठा चित्र देखता रहा। फिर उठा, मेज से मोमबत्ती उठाई और कमरे के दूर वाले कोने में समुद्र की ओर खुलने वाली खिड़की के पास जाकर बैठ गया। वहां बैठने के बाद उसने फिर कागज को गौर से चारों तरफ उलट-पुलट और घुमा-फिराकर देखा। उसने कहा कुछ भी नहीं,

लेकिन उसके व्यवहार से मैं आश्चर्यचकित था; फिर भी मैंने बुद्धिमानी इसी में समझी कि कुछ भी न कहूं, क्योंकि मेरी किसी टिप्पणी से संभवतः उसका क्रोध और बढ़ जाता। थोड़ी देर बाद उसने अपने कोट से एक थैली निकाली। उस थैली में पहले उसने वह कागज मोड़कर सावधानी से रखा और फिर थैली डेस्क में रखकर उसमें ताला लगा दिया। अब उसके व्यवहार में पहले से कहीं अधिक गंभीरता थी। लेकिन आरम्भ वाला उत्साह गायब हो चुका था। फिर भी वह पहले की तरह मुंह फुलाए था किन्तु अब किसी सोच में डूबा प्रतीत हो रहा था। ज्यों-ज्यों रात चढ़ने लगी त्यों-त्यों उसकी विचार-मग्नता बढ़ती ही गई। उसका मन बदलने के मेरे सारे प्रयत्न निरर्थक हुए। अन्य कई अवसरों की भांति मैं रात अपने मित्र के साथ ही बिताना चाहता था लेकिन अपने आतिथेय की यह मुद्रा देख मैंने विदा लेकर चल देना ही उचित समझा। उसने मुझसे रुकने के लिए भी आग्रह नहीं किया, किन्तु जब मैंने जाने के लिए कहा तो उसने पहले से भी अधिक सौहार्दता से मुझसे हाथ मिलाकर विदाई दी।

इस घटना के एक मास बाद (इस बीच मुझे लेग्राण्ड की कोई खबर नहीं मिली) चार्ल्सटन में लेग्राण्ड का नौकर जुपिटर मेरे पास आया। मैंने उस बूढ़े नीग्रो को पहले कभी इतना निराश और दुःखी नहीं देखा था। मुझे यह आशंका हो गई कि कहीं मेरा मित्र किसी बहुत बड़े संकट में तो नहीं पड़ गया।

"अच्छा जुपिटर, पहले यह तो बताओ कि बात क्या है?" मैंने कहा, "तुम्हारे मालिक की कैसी तबीयत है?"

"सच तो यह है कि उन्हें जितना स्वस्थ होना चाहिए उतने स्वस्थ वे नहीं हैं।"

"अस्वस्थ हैं।—यह सुनकर सचमुच मुझे बड़ा खेद हो रहा है। क्यों? उन्हें शिकायत क्या है?"

"शिकायत तो वे कुछ नहीं करते लेकिन दिनभर बड़े सुस्त और उदास-से रहते हैं। बीमार-से रहते हैं।"

"बहुत बीमार-से रहते हैं जुपिटर? तो यह बात तुमने मुझे पहले क्यों नहीं बतलाई। क्या वे खटिया से लगे हैं?"

"नहीं, सो बात नहीं है। उन्हें कोई खास तकलीफ भी नहीं है। लेकिन वे दिन-दिन भर गायब रहते हैं और यही परेशानी की बात है—इससे मासा विल के सम्बन्ध में मैं बहुत चिंतित रहता हूं।"

"जुपिटर, मैं जानना चाहता हूं कि आखिर बात क्या है? तुम कहते हो कि मालिक बीमार हैं—तो क्या उन्होंने तुम्हें यह नहीं बतलाया कि उन्हें बीमारी क्या है?"

"नहीं, उन्होंने यह बिलकुल नहीं बताया कि असल बात क्या है लेकिन पता नहीं वे नीचे ही नीचे क्या देखते हैं और जब वे अपना चेहरा ऊपर उठाते हैं तो वह एकदम सफेद होता है; और फिर उनके हाथ में हर समय स्लेट-पेंसिल रहती है।"

"क्या, अपने हाथ में क्या रखते हैं जुपिटर?"

"हमेशा अपने हाथ में पेंसिल लिए हुए स्लेट पर कुछ अक्षर और अंक लिखा करते हैं। मैं आपको बताता हूं, वे पागल होते जा रहे हैं। मुझे उनपर दिन-रात बहुत कड़ी निगाह रखनी पड़ती है। एक दिन सुबह वे मुझे चकमा देकर सूर्योदय के समय घर से गायब हो गए और दिन भर गायब रहे। मैंने तो एक बड़ा-सा बेंत काटकर रख लिया था और सोचा था कि जब वे लौटेंगे तो उनकी खूब पिटाई करूंगा। लेकिन जब वे घर लौटे तो उनके सूखे हुए चेहरे को देखकर मेरा सारा गुस्सा गायब हो गया।"

"ऐं, क्या!—हां—मेरा ख्याल है कि तुम्हें अपने मालिक के साथ बहुत अधिक सख्ती नहीं करनी चाहिए—और खासतौर से मारना तो बिलकुल ही नहीं चाहिए, क्योंकि वे उसे सहन नहीं कर सकेंगे। लेकिन तुम्हारा क्या ख्याल है; उनकी बीमारी का क्या कारण हो सकता है या उनके व्यवहार में जो परिवर्तन हुए उसका क्या कारण है? जब मैं पिछली बार मिला था उसके बाद क्या कोई अप्रिय घटना हो गई?"

"नहीं, तब से कोई अप्रिय घटना तो नहीं हुई—लेकिन उससे पहले मुझे भय है, अवश्य हुई थी। और वह उसी दिन हुई थी जिस दिन आप वहीं थे।"

"क्या? कैसे? तुम्हारा क्या मतलब है?"

"मेरा मतलब उस कीड़े से है।"

"कौन-सा कीड़ा?"

"वह कीड़ा—वही सुनहला कीड़ा। मुझे तो पक्का विश्वास हो गया है कि उस कीड़े ने अवश्य ही मेरे मालिक के सिर में कहीं काट खाया है।"

"और तुम्हारी इस कल्पना का आधार क्या है?"

"उसके पंजे और उसका मुंह! मैंने अपनी जिन्दगी में ऐसा कीड़ा कभी नहीं देखा। वह तो जो चीज़ उसके सामने पड़ती उसे नोचता-खसोटता था, और जो भी उसके पास आता था उसे ही काटता था। मासा विल ने पहले तो उसे हंसी-हंसी में पकड़ लिया था लेकिन उसने उन्हें भी इतनी ज़ोर से काटा कि वह तुरन्त ही उनके हाथ से छूट गया। मैं कहता हूं अवश्य ही उसी समय मासा विल को उसने फिर काटा होगा। पता नहीं क्यों, मुझे उस कीड़े का मुंह बिलकुल अच्छा नहीं लगता और इसीलिए मैंने उस कीड़े को अंगुलियों से नहीं पकड़ा था बल्कि पास ही पड़े कागज़ को उठाकर उससे पकड़ा था। मैंने कागज़ में उस कीड़े को लपेटकर उसका मुंह दबा दिया था।"

"और तुम समझते हो कि तुम्हारे मालिक को उसी कीड़े ने काटा था और उसी के काटने से वे बीमार हो गए हैं?"

"मैं सोचता था, समझता कुछ नहीं हूं।···मैं नहीं जानता, अगर उस सुनहले कीड़े ने ही उन्हें नहीं काटा है तो फिर क्या कारण है कि वे हर वक्त उसी कीड़े के बारे में सोचते रहते हैं और उन्हें उसी के स्वप्न भी आते हैं; वे उसी कीड़े की बातें करते हैं। क्या पहले भी कभी किसी ने ऐसे अभागे कीड़े के बारे में सुना है?"

"लेकिन तुम्हें यह कैसे मालूम पड़ा कि सोते हुए स्वप्न में भी

वे इसी कीड़े के बारे में ही सोचते रहते हैं?"

"मुझे कैसे मालूम पड़ा—क्यों? वे सोते में जब बकते हैं तो उनके मुंह से जो शब्द निकलते हैं वे इस कीड़े के बारे में ही होते हैं। बस, इसी बर्राने से ही मुझे उनकी बात का पता लगा।"

"शायद तुम ठीक कहते हो जुपिटर। लेकिन मुझे यह तो बताओ कि आज तुम इधर कैसे घूम पड़े। क्या कोई संदेश लाए हो?"

"नहीं, कोई संदेशा तो नहीं लाया हूं लेकिन एक पत्र अवश्य लाया हूं।" और यह कहते हुए बूढ़े ने मुझे कागज़ पकड़ा दिया। उसमें लिखा था :

"प्रिय······

"इधर बहुत दिनों से आए क्यों नहीं? आशा है आपने मेरी किसी थोड़ी-बहुत अशिष्टता का बुरा न माना होगा। आशा ही नहीं बल्कि मेरा तो विश्वास है कि आप किसी छोटी-मोटी बात का बुरा कभी नहीं मानेंगे।

"पिछली बार जब आप मिले थे तब से मैं एक बुरी चिन्ता में पड़ गया हूं। मुझे आपसे एक बात कहनी है; लेकिन मेरी समझ में नहीं आया कि वह बात मैं आपको किस तरह बतलाऊं, या बताऊं भी अथवा नहीं।

"पिछले कुछ दिनों से मैं स्वस्थ नहीं हूं और उसपर यह बूढ़ा जुपिटर मुझे बड़ा तंग करता है। हालांकि उस बेचारे का मतलब मेरी शुभचिन्ता ही होता है किन्तु कभी-कभी तो उसकी बातें सहन-शक्ति के बाहर हो जाती हैं। क्या आप विश्वास करिएगा कि इस नौकर ने मुझे मारने के लिए एक बेंत काटकर घर में रख छोड़ा था? कारण, मैं एक दिन इसे अपने साथ लिए बिना पहाड़ियों में अकेला ही घूमता रहा था। मुझे पक्का विश्वास है कि उस दिन अपनी शारीरिक अस्वस्थता के लक्षणों के कारण ही मैं पिटने से बचा।

"उस दिन के बाद से मेरे संग्रह में अभी तक और किसी नए कीड़े की वृद्धि नहीं हुई है।

"यदि आपको सुविधा हो तो आप जुपिटर के साथ चले आएं। मेरा आग्रह है कि आप अवश्य आएं। मैं महत्त्वपूर्ण कार्यवश आज ही आपसे मिलना चाहता हूं। मैं आपको फिर लिख रहा हूं कि कार्य अति आवश्यक है।

सदैव आपका
विलियम लेग्राण्ड"

इस पत्र की ध्वनि कुछ ऐसी थी कि उससे मुझे बड़ी बेचैनी हुई। पत्र की शैली लेग्राण्ड के व्यक्तित्व से बिलकुल भिन्न थी। उसे क्या सपने आ सकते हैं? उसके दिमाग में अब कौन-सा कीड़ा रेंग रहा है? ऐसा क्या जरूरी काम उसे है? जुपिटर की बातों से कुछ भी पता नहीं चलता। मुझे यह भय होने लगा कि कहीं दुर्भाग्य और विपत्तियां लेग्राण्ड को पागल न बना दें। एक मिनट भी सोचे-विचारे बिना मैं नीग्रो के साथ चलने के लिए तैयार हो गया।

घर से विदा होकर जब हम लोग डोंगी के पास पहुंचे, मैंने देखा कि उस छोटी-सी नौका में तीन फावड़े, हंसिया और एक कुदाल रखी थी। देखने में सभी सामान नया लगता था।

मैंने पूछा, "भाई यह सब किसलिए?"

"इन्हीं सबको खरीदने के लिए तो मासा विल ने मुझे शहर भेजा था। बुरा हो इनका, इन फावड़े-कुदालों के खरीदने में ही काफी गांठ कट गई।"

"लेकिन यह रहस्य क्या है? इन फावड़ों-कुदालों का तुम्हारे मालिक क्या करेंगे?"

"यह तो मैं भी नहीं जानता। खुद मालिक को भी पता नहीं है कि उन्होंने इन सबको किसलिए मंगाया है। लेकिन यह सब उन्हीं कीड़े महाराज की कृपा है।"

यह देखकर कि जुपिटर के दिमाग में भी कीड़ा ही भरा है, उससे कोई सन्तोषजनक उत्तर मिलने की आशा नहीं है, मैं उस नीग्रो के साथ डोंगी में बैठ गया और डोंगी जलधारा में तिर चली। हवा अनुकूल और अच्छी थी इसलिए हम जल्दी से फोर्ट मौल्ट्री के ऊपरी किनारे जा लगे और दो मील चलकर लेग्राण्ड की कुटिया पर पहुंच गए। समय कोई दोपहर बाद तीन बजे का होगा। लेग्राण्ड हम लोगों की बड़ी अधीरता से प्रतीक्षा कर रहा था। हाथ मिलाते हुए उसने जिस तरह मेरी हथेली को दबाया इससे उसकी घबराहट स्पष्ट हो गई तथा मेरे मन में जो भय और सन्देह था वह और भी स्पष्ट हो गया। मेरे मित्र का चेहरा बिलकुल पीला और विकृत-सा लगता था। आंखें गढ़ों में धंस गई थीं और उनकी चमक में पहले जैसी स्वाभाविकता नहीं थी। मैंने पहले तो उसके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में प्रश्न पूछे। इसके बाद और कुछ जब समझ में नहीं आया तो मैं यही पूछ बैठा कि अभी तक उसने लेफ्टीनैन्ट जी० से यह सुनहला कीड़ा वापस मंगाया है या नहीं?

"हां," मेरे मित्र ने उत्तर दिया, "मैंने तो उससे दूसरे दिन ही सुबह मंगवा लिया था। मुझे कोई भी लालच इस कीड़े से अलग नहीं कर सकता; और आप जानते हैं, उस कीड़े के बारे में जुपिटर का ख्याल बिलकुल सही था।" यह कहते हुए लेग्राण्ड के चेहरे का रंग बिलकुल बदल गया।

"किस तरह?" मैंने दुःखित भाव से पूछा।

"जुपिटर का यह कहना था कि वह कीड़ा ठोस सोने का है। उसका यह कहना ठीक ही था।" पर यह बात मेरे मित्र ने इस गम्भीरता से कही कि हृदय को धक्का-सा लगा।

"यह कीड़ा ही मेरा भाग्य-विधाता है।" अपनी बात जारी रखते हुए विनयपूर्ण मुसकराहट के साथ लेग्राण्ड ने कहा, "इसकी बदौलत मुझे अपने परिवार की जायदाद वापस मिल जाएगी। तो क्या यह कोई आश्चर्य की बात है कि मैं उस कीड़े को कीमती समझता हूं? चूंकि भाग्यवश मुझे अवसर मिल गया है, इसलिए मैं उस खजाने को पा ही लूंगा जिसकी कि वह कुंजी है। शक यही है कि मैं कुंजी का ठीक-ठीक प्रयोग करूं। जुपिटर, वह कीड़ा मुझे लाकर देना तो!"

"क्या? वह कीड़ा? मैं उसे नहीं उठाऊंगा। बेहतर है कि आप ही यह तकलीफ करें।" इसपर लेग्राण्ड बड़ी शान से गम्भीरतापूर्वक अपनी कुर्सी से उठ खड़ा हुआ और वह कांच का केस ले आया जिसमें सुनहला कीड़ा रखा हुआ था। कीड़ा सचमुच बहुत सुन्दर था और मेरा विश्वास है कि बहुत से कीट-शास्त्रियों को उसके अस्तित्व का ज्ञान नहीं होगा। निस्सन्देह वैज्ञानिक दृष्टि से वह बड़ा ही मूल्यवान था। उसकी पीठ के दोनों ओर काले धब्बे थे। एक धब्बा कुछ बड़ा और दूसरा कुछ छोटा। पीठ का सारा हिस्सा बिलकुल ठोस, चिकना और सोने की तरह चमक रहा था। कीड़े का वजन सचमुच काफी था और इस सम्बन्ध में जुपिटर की जो राय थी उसे मानने के लिए मैं बाध्य हो गया। परन्तु मेरी समझ में लेग्राण्ड की बात बिलकुल नहीं आ रही थी।

लेग्राण्ड ने बहुत बड़े व्याख्याता जैसे स्वर में कहा, "मैंने आपको इसलिए बुलाया है कि आप इस कीड़े और अपने भाग्य-निर्माता के सम्बन्ध में मुझे परामर्श दें और उस दशा में मेरी सहायता करें..."

"लेकिन प्यारे भाई लेग्राण्ड!" मैंने उसकी बात काट दी, "निश्चय ही तुम अस्वस्थ हो और तुम्हारे लिए यही लाभदायक होगा कि ज़रा सावधानी से रहो। तुम बिस्तर पर लेट जाओ और आराम करो। जब तक तुम बिलकुल ठीक नहीं हो जाते तब तक कुछ दिन मैं तुम्हारे ही साथ रहूंगा। तुम्हें हरारत है..."

"लो मेरी नब्ज़ देखो," उसने कहा।

मैंने उसकी नब्ज़ देखी और मुझे मानना पड़ा कि नब्ज़ में ज्वर का कोई लक्षण नहीं था।

"लेकिन हो सकता है कि तुम अस्वस्थ होते हुए भी ज्वरमुक्त हो। मेरा कहना मानो और सीधे बिस्तर में जाकर लेट जाओ। इसके बाद..."

मेरी बात लेग्राण्ड ने फिर काट दी और कहा, "तुम भूल कर रहे हो, इस समय मैं जिस उत्तेजित अवस्था में हूं उसे देखते हुए मुझे जितना

स्वस्थ होना चाहिए उतना स्वस्थ मैं हूं। और अगर तुम मेरे सच्चे शुभचिंतक हो तो उस उत्तेजना से मुक्त होने में मेरी सहायता करो।"

"और तुम्हें इस उत्तेजना से मुक्त किस प्रकार किया जाए?"

"ऐसा करना बहुत आसान है। जुपिटर और हम मुख्य स्थल पर जो पहाड़ियां हैं उनपर जा रहे हैं, और उस काम में हमें कुछ ऐसे आदमियों की ज़रूरत है जिनपर हम विश्वास कर सकें; और तुम ही ऐसे आदमी हो जिसके सामने बिना किसी खतरे के भेद खोला जा सकता है। मैं इस अभियान में सफलता प्राप्त करूं या असफलता.. हर अवस्था में यह उत्तेजना जो तुम मुझमें देख रहे हो अपने आप दूर हो जाएगी।"

मैंने उत्तर दिया, "मैं हर तरह तुम्हारी सहायता करने के लिए अधीर हूं। लेकिन क्या इस नारकीय कीट का भी तुम्हारे इस पर्वत अभियान से कोई सम्बन्ध है?"

"हां।"

"तो फिर लेग्राण्ड, मैं इस तरह की बेहूदगी के काम में कोई हिस्सा नहीं ले सकता।"

"मुझे खेद है—बहुत खेद है—क्योंकि यह काम फिर हमें अकेले ही करना होगा।"

"ठीक है अकेले ही करो। यह आदमी सचमुच पागल है! लेकिन तुम कितनी देर बाहर रहोगे?'

"सम्भवतया सारी रात। हम लोग अभी चल देंगे और हर दशा में सूर्योदय तक घर वापस लौट आएंगे।"

"और फिर क्या तुम मुझे यह वचन देते हो कि जब तुम्हारी यह सनक उतर जाएगी और इस कीड़े वाली बात का अन्त हो जाएगा (हे भगवान!) और जब तुम घर लौट आओगे तो मेरी सलाह बिना किसी आपत्ति के मानोगे और साथ ही डाक्टर जैसे कहेगा और जो चाहेगा वैसा करोगे?"

"हां मैं वादा करता हूं। और अब हम लोगों को जल्दी से जल्दी

चल देना चाहिए क्योंकि अब एक क्षण भी गंवाने के लिए हमारे पास नहीं है।"

भारी मन से मैं अपने मित्र के साथ चल दिया। हम लोग अर्थात् लेग्राण्ड, जुपिटर, कुत्ता और मैं शाम के करीब चार बजे घर से रवाना हुए। कुदाल, हंसियां और फावड़े जुपिटर ने लादे। इसका कारण परिश्रम या भक्ति-भावना उतनी नहीं था जितना भय। यह भय कि मालिक के हाथ में ऐसी कोई चीज न रहे जिससे वह प्रहार कर सके। पूरी यात्रा पर 'अभागा कीड़ा' यही शब्द बुड्ढे के मुंह से निकलता रहा। उसका आचरण भी ऐसा रहा जिससे असंतोष के अलावा और कुछ प्रकट न होता था। मेरे हाथ में कुछ लालटेनें थीं और लेग्राण्ड के हाथ में कोड़ा और उस कोड़े के एक भाग में वही सुनहला कीड़ा चिपका था। वह बार-बार कोड़े को बल देता था और फिर उसे छोड़ देता था; जिससे वह खूब तेजी से घूमने लगता था। जब मैंने बार-बार इस तरह से अपने मित्र को करते देखा तो उसकी अर्ध-विक्षिप्तता देख मेरी आंखें भर आईं। लेकिन उस समय मैंने यही उचित समझा कि लेग्राण्ड जैसा कर रहा है, उसे वैसा ही करने दिया जाए, कम से कम उस समय तक जब तक मैं कोई ऐसा उपाय न कर पाऊं जिसके सफल होने की आशा हो। इस बीच मैंने कई बार यात्रा का उद्देश्य जानने का असफल प्रयत्न किया। अपने साथ मुझे ले आने में सफल हो जाने के बाद से लेग्राण्ड किसी भी इधर-उधर के प्रसंग पर बात-चीत करता जा रहा था लेकिन जो प्रश्न मैं पूछता उसका उत्तर 'अच्छा देखेंगे' के अलावा कुछ न मिलता।

छोटी-सी डोंगी के सहारे हमने जलधारा पार की। तटवर्ती ऊंची भूमि पर चढ़ने के बाद हम उत्तर-पश्चिम दिशा में चल दिए। रास्ता निर्जन और जंगली था। कहीं मानव पद-चिह्नों का निशान भी नहीं मिलता था। लेग्राण्ड दल का नेतृत्व कर रहा था। रास्ते में वह कभी रुककर उन निशानों को देख लेता था जो रास्ता याद रखने के लिए पहले किसी अवसर पर लगा दिए गए थे।

इस तरह कोई दो घंटे तक हम लोग चलते रहे। सूर्यास्त के करीब हमारे दल ने ऐसे जंगली क्षेत्र में प्रवेश किया जो डरावना था। ऐसा जंगल पहले हमने कभी नहीं देखा था। यह ऐसा पठारी हिस्सा था जो किसी पहाड़ी के शिखर पर था। इस पहाड़ी पर किसी व्यक्ति का सामान्यतः पहुंचना ही बड़ा कठिन था। पहाड़ी नीचे से ऊपर तक वनों से लदी थी। रास्ते में चट्टानों के बड़े-बड़े टुकड़े पड़े थे। कुछ को देखकर ऐसा लगता था कि यदि पेड़ उन टुकड़ों को न रोके हों तो वे लुढ़ककर नीचे ही पहुंच जाएंगे। बहुत-सी चट्टानें मिट्टी में धंसी पड़ी थीं। इधर-उधर जहां नजर जाती थी, वहां गहरे गड्ढे भी दिखलाई पड़ते थे, जिनकी वजह से दृश्य और भी अधिक भयावना लगता था।

हम जिस ऊंची जमीन पर चल रहे थे उसपर काफी ऊंची घास-पात फैली थी। इसपर चढ़ते हुए हमने शीघ्र ही अनुभव कर लिया कि यदि हमारे पास हंसिया और कुदाल नहीं होतीं तो हमारा आगे बढ़ना बिलकुल असंभव था। जुपिटर ने अपने मालिक की आज्ञानुसार एक बहुत बड़े ट्यूलिप पेड़ तक पहुंचने के लिए घास काटकर रास्ता तैयार कर दिया था। इस पेड़ के आसपास शाहबलूत के आठ-दस वृक्ष थे, किन्तु ट्यूलिप का वृक्ष उन सबसे कहीं अधिक ऊंचा था। मैंने उतना सुन्दर पेड़ कभी नहीं देखा था। उसकी शक्ल, उसकी पत्तियां चौड़ी टहनियां और शाखाएं सभी कुछ मिलाकर पेड़ बड़ा शानदार लगता था। जब हम उस पेड़ के पास पहुंच गए तो लेग्राण्ड ने जुपिटर की ओर मुड़कर उससे पूछा कि क्या वह उस पेड़ पर चढ़ सकता है। इस प्रश्न से बूढ़ा नीग्रो घबरा गया और कुछ देर तक कोई जवाब नहीं दे सका। अन्ततः वह पेड़ के पास गया, घूम-फिरकर उसका तना वगैरह ध्यान से देखा और फिर बोला, "हां मालिक! इस पेड़ पर क्या, जुपिटर किसी भी पेड़ पर चढ़ सकता है।"

"तो ठीक है, फिर तुम जल्दी से जल्दी ऊपर चढ़ जाओ, क्योंकि यदि तुमने देर की तो अंधेरा हो जाएगा और हम वह चीज न देख

पाएंगे जिसके लिए चलकर हम यहां तक आए हैं।"

"मुझे कितना ऊपर चढ़ना है?" जुपिटर ने पूछा।

"पहले तुम तने से ऊपर चढ़ो। इसके बाद मैं तुम्हें बतलाऊंगा कि किस तरफ जाना है—और हां—ज़रा रुकना। अपने साथ यह कीड़ा भी सावधानी से ऊपर लेते जाओ।"

"कीड़ा! कीड़ा, मालिक!" नीग्रो ने चिल्लाकर कहा और वह आवेश में पीछे हट गया, "कीड़े को पेड़ के ऊपर ले जाना क्या ज़रूरी है? न, न, बाबा, मैं नहीं ले जाऊंगा।"

"अगर तुम जैसा लम्बा-तगड़ा नीग्रो इस मरे हुए कीड़े को ऊपर ले जाने से डरता है तो फिर मुझे उसका यही इलाज करना पड़ेगा कि यह फावड़ा उठाकर उसका सिर फोड़ डालूं। और क्यों? यह डोरी पकड़कर तुम इसे ऊपर ले जा सकते हो।"

"क्या बात है मालिक?" जुपिटर ने अपनी मजबूरी समझ ली थी और वह आज्ञानुसार काम करने को राज़ी भी हो गया था, "आप हर वक्त मुझसे झगड़ा क्यों करते हैं? मैं तो केवल मज़ाक कर रहा था। क्या मैं कीड़े से डरता हूं? मैं इस कीड़े की ज़रा भी परवा नहीं करता।" यह कहकर जुपिटर ने बड़ी सावधानी से कीड़े की रस्सी का वह हिस्सा पकड़ लिया जिसपर वह कीड़ा चिपका हुआ था और उस रस्सी को जितना भी संभव था उतनी दूर रखते हुए पेड़ पर चढ़ने की तैयारी करने लगा।

ट्यूलिप अमरीका के जंगलों का सबसे शानदार वृक्ष है। जवानी में इस पेड़ का तना बड़ा चिकना होता है और काफी ऊपर तक तने से कोई शाखा नहीं फूटती, लेकिन काफी बरसों बाद इसकी छाल और तना विषम हो जाते हैं और खुटे-खुटे-से लगते हैं। इसमें छोटी-छोटी टहनियां भी निकल आती हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि चढ़ने में दिक्कत होगी, किन्तु वस्तुतः चढ़ने में कठिनाई नहीं होती। दो-एक बार रपटने के बाद लेकिन बिना गिरे जुपिटर कुछ ही क्षणों में ऊपर चढ़ गया और जहां से बड़ी शाखा फूटती थी, वहां जाकर इस

तरह बैठ गया जैसे सारा काम ही समाप्त हो गया हो। चढ़ने में जो खतरे थे, उनको जुपिटर ने पार कर लिया था। वह उस समय ज़मीन से साठ या सत्तर फीट ऊपर था।

"अब मैं किधर जाऊं मालिक?" उसने पूछा।

"बड़ी शाखा पर ही—इधर की ओर ऊपर चढ़ो!" लेग्राण्ड ने कहा। नीग्रो ने बिना किसी कठिनाई के आज्ञा का पालन किया। वह क्रमशः ऊपर ही ऊपर चढ़ता गया और कुछ देर बाद पेड़ की हरीतिमा में सर्वथा लुप्त हो गया। उसकी आवाज़ ऐसा लगता था जैसे किसी घिरी हुई जगह से आ रही है।

"अब और आगे जाऊं?"

"तुम कितने ऊपर हो?" लेग्राण्ड ने पूछा।

"अब इतना ऊपर आ गया हूं कि पेड़ की फुनगी और आकाश तक देख सकता हूं।" नीग्रो ने उत्तर दिया।

"आकाश की फिक्र छोड़ो, और जो मैं कहता हूं वह ध्यान से सुनो। नीचे तने की ओर देखो और गिनो कि तुम कितनी शाखाओं से ऊपर जा चुके हो!"

"एक, दो, तीन, चार, पांच,—मालिक, मैं इस तरह पांच शाखा ऊपर आ चुका हूं।"

"तो एक शाखा और ऊपर चढ़ो।"

कुछ ही मिनटों में आवाज़ आई कि वह सातवीं शाखा पर पहुंच गया है।

लेग्राण्ड ने ज़ोर से चिल्लाते हुए कहा, "अब जुपिटर, तुम इस शाखा पर जितना संभव हो आगे बढ़ जाओ और तुम्हें कोई अजीब चीज़ दिखलाई पड़े तो मुझे बतलाओ।"

अपने मित्र की विक्षिप्तता पर यदि उस समय तक मुझे कोई संदेह था तो वह भी दूर हो गया। मैं अपने मित्र को पागल के सिवाय और कुछ भी नहीं कह सकता था। मुझे यह भी चिन्ता हो गई कि अब उन्हें साथ लेकर घर वापस कैसे पहुंचा जाएगा। मैं इसी चिन्ता

में डूबा हुआ था—अब क्या करूं, कि जुपिटर की आवाज़ फिर सुनाई दी।

"मैं इस डाल पर बहुत आगे बढ़ गया हूं, यह तो बिलकुल बेजान है?"

"क्या कहा तुमने, बेजान है?" लेग्राण्ड ने कंपित आवाज़ में जुपिटर से पूछा।

"हां मालिक, बिलकुल बेजान है।"

"हे भगवान्, अब मैं क्या करूं," लेग्राण्ड ने बहुत परेशान होते हुए कहा।

"क्या करो!—घर चलो आराम से बिस्तर पर लेटो," मुझे कुछ कहने का अवसर मिला था। मैंने तत्काल उसका उपयोग किया, "आओ चलें। तुम तो बड़े अच्छे हो। अब देर हो रही है और फिर तुम्हें अपना वायदा तो याद ही होगा।"

"जुपिटर!" लेग्राण्ड ने मेरी बात सुनी अनसुनी करते हुए कहा, "जुपिटर, मेरी आवाज़ तुम्हें सुनाई पड़ रही है क्या?"

"हां मालिक! आपकी आवाज़ बिलकुल साफ-साफ सुनाई पड़ रही है।"

"अपने चाकू से डाल को छीलकर देखो—देखो, क्या वह बिलकुल बेजान है?"

"बिलकुल सड़ी और बेजान है, मैं दावे से कहता हूं।" कुछ देर बाद नीग्रो ने कहा, "लेकिन अब उतनी सड़ी नहीं लग रही जितनी मैं पहले समझ रहा था। मैं इसपर कुछ दूर और आगे भी जा सकता हूं लेकिन अकेला ही।"

"अकेला क्या?—क्या मतलब है तुम्हारा?"

"क्यों, मेरा मतलब है कि मैं अकेला जा सकता हूं कीड़ा अपने साथ नहीं ले जा सकता। यह कीड़ा बड़ा भारी है। मेरी तबीयत आ रही है कि इस कीड़े को मैं नीचे फेंक दूं। फिर हलका हो जाऊंगा और एक नीग्रो के वज़न से यह डाल नहीं टूटेगी।"

"अबे ओ गधे!" लेग्राण्ड ने चिल्लाते हुए कहा, किन्तु उसकी आवाज़ में पहले जैसी बेचैनी अब नहीं थी, "यदि तूने कीड़े को नीचे गिराया तो याद रखना तेरी खोपड़ी भी साबित नहीं बचेगी। और मेरी बात सुन।"

"हां, मालिक सुन रहा हूं। लेकिन आपको इस बूढ़े नीग्रो पर इतना गुस्सा तो नहीं करना चाहिए।"

"अच्छा, अच्छा। मेरी बात सुन। अगर कीड़ा बिना गिराए तू डाल पर वहां तक आगे खिसक गया जहां तक जाने में नीचे गिरने का खतरा नहीं है तो मैं नीचे उतरते ही चांदी का एक डालर इनाम दूंगा।"

"मैं आगे खिसक रहा हूं मालिक," नीग्रो ने तत्काल उत्तर दिया। "अब मैं डाल के आखिरी भाग तक पहुंच गया हूं।"

"बिलकुल आखिरी भाग तक!" लेग्राण्ड ने चिल्लाकर पूछा, "क्या बिलकुल छोर तक।"

"शीघ्र ही छोर तक भी पहुंच जाऊंगा मालिक!—ऊ ssss ह! हे भगवान्! इस पेड़ पर यह क्या है?"

"क्या है वह?" लेग्राण्ड ने खुश होते हुए पूछा।

"कुछ नहीं। मरे आदमी की खोपड़ी टंगी है। किसी ने इसे यहां टांग दिया है। कौए वगैरह इसका सारा गोश्त खा गए हैं। खाली हड्डी ही हड्डी रह गई है।"

"क्या? क्या कहा, वहां खोपड़ी है? वह डाल से कैसे बंधी हुई है? वह वहां कैसे रुकी है?"

"देखकर बताता हूं मालिक!—बड़ी अजीब ढंग से खोपड़ी डाल पर रुकी है। उसे एक कील गाड़कर डाल में ठोंक दिया गया है।"

"अब जुपिटर, मैं जैसा कहूं, वैसा करो।"

"अच्छा मालिक।"

"ध्यान से देखो, बाईं आंख कौन-सी है।"

"हूं ·· । यहां कोई आंख ही नहीं है।"

"बिलकुल मूर्ख हो। तुम्हें अपना दाहिना या बायां हाथ भी मालूम है या नहीं?"

"हां जानता हूं। यह बायां हाथ है, मैं इसी से लकड़ी काटता हूं।"

"ठीक है। तुम्हारा सारा काम बाएं हाथ से ही होता है। तुम्हारी बाईं आंख भी उधर ही है, जिधर बायां हाथ। अब तुम्हें खोपड़ी की बाईं आंख भी मिल जानी चाहिए। मिली?"

इसके बाद कुछ देर तक सन्नाटा रहा। अन्त में नीग्रो ने पूछा, "क्या खोपड़ी की बाईं आंख भी उसी तरफ होगी जिस तरफ उसका बायां हाथ? लेकिन हाथ के नाम पर यहां कुछ भी नहीं है।—मुझे बाईं आंख मिल गई। अब क्या करूं इस बाईं आंख का?"

"अब कीड़े को इस आंख में से गुजारकर जहां तक रस्सी जाय नीचे कर दो। लेकिन ख्याल रखना रस्सी हाथ से न छूटने पाए।"

"मालिक हो गया जैसा आपने कहा था।"

इस वार्ता के दौरान में जुपिटर के शरीर का कोई भाग हम लोगों को नहीं दिखलाई पड़ रहा था, लेकिन अब हमें वह कीड़ा रस्सी के छोर पर दिखलाई पड़ने लगा था, जिसे वह नीचे गिरा रहा था। अस्तायमान सूर्य की अंतिम किरणों में वह कीड़ा सुनहले सितारे की तरह चमक रहा था। कीड़ा किसी भी शाखा या टहनी से ढका नहीं था, और यदि उसे वहीं से नीचे छोड़ दिया जाता, जहां वह दिखलाई पड़ रहा था, तो वह सीधा हमारे पैरों पर ही आकर गिरता। लेग्राण्ड ने तत्काल ही कुदाल लेकर कीड़े की सीध में बिलकुल नीचे तीन या चार गज व्यास का वृत्त खींच दिया। इतना करके जुपिटर से लेग्राण्ड ने कहा कि वह कीड़ा नीचे गिरा दे और नीचे उतर आए।

कीड़ा जिस स्थान पर नीचे गिरा था, ठीक उसी जगह मेरे मित्र ने एक खूंटा गाड़ दिया। इसके बाद अपनी जेब से गज़-फुट नापने वाला फीता निकाला। एक छोर को वृक्ष के तने से बांधकर लेग्राण्ड

उस फीते को खूंटे तक लाया। इसके बाद खूंटे से उन दो निशानों तक, जिनको पहले ही लगा लिया था, फीता पचास फीट की दूरी तक ले गया। जुपिटर ने हंसिए से सारी घास-पात साफ कर दी। पचास फुट जहां पूरे हो गए वहां फिर एक खूंटा गाड़ दिया गया। इस खूंटे को बिन्दु मानकर लेग्राण्ड ने कोई चार गज़ व्यास का फिर एक वृत खींचा। इसके बाद एक फावड़ा जुपिटर को देकर और एक स्वयं अपने हाथ में लेकर लेग्राण्ड ने मुझसे भी अनुरोध किया कि तीसरा फावड़ा मैं भी ले लूं और उनके साथ ही ज़मीन खोदने में लग जाऊं।

सच तो यह है कि मैं किसी भी समय इस तरह के मनोरंजन को पसन्द नहीं करता। और उस समय तो ऐसे काम में हाथ बटाने से इंकार कर देने पर मुझे बड़ी खुशी ही होती, क्योंकि रात सिर पर खड़ी थी, और इतने लम्बे सफर के बाद मैं बड़ी क्लान्ति अनुभव कर रहा था। परन्तु बचने का कोई रास्ता नज़र नहीं आ रहा था और मैं साफ इंकार करके लेग्राण्ड को नाराज़ नहीं करना चाहता था। यदि मुझे जुपिटर की सहायता का विश्वास होता तो मैं उस पागल को बलात् घर वापस ले जाता। लेकिन मैं उस नीग्रो का यह स्वभाव जानता था कि वह अपने मालिक के विरुद्ध बलपूर्वक ऐसा कार्य करने में मेरी सहायता किसी भा दशा में कभी नहीं करेगा। मैं अब पक्की तरह से यह मानने लगा था कि लेग्राण्ड को किसी तरह दक्षिणी अमरीकनों की भांति यह मूढ़ विश्वास हो गया है कि यहां आसपास कहीं गड़ा खज़ाना है। इस अंधविश्वास की पुष्टि में सुनहले कीड़े का भी हाथ है। संभवतः जूपिटर ने ही यह विश्वास लेग्राण्ड के दिमाग में बैठाने की और कोशिश की हो कि यह कीड़ा असली सोने का है। पागल आदमी ऐसी बात पर आसानी से विश्वास भी कर लेता है—विशेष रूप से उस समय तो और भी अधिक जब वह सुझाव उसके पहले के विचारों से मिलता हो। और फिर मुझे याद आया कि लेग्राण्ड ने मुझसे अपनी कुटिया में चलने के पूर्व कहा था

कि कीड़ा ही उसके भाग्य की कुंजी है। कुल मिलाकर मैं बहुत दुःखी था और बड़ी उलझन में पड़ा हुआ था। अंत में मैंने परिस्थितियों से बाध्य होकर सिर नवा दिया और इसी में कुशल समझी कि चुपचाप खुशी-खुशी खोदने के काम में जुट जाऊं और इस प्रकार दिन में सपना देखने वाले इस आदमी को यह दिखला दूं कि उसका सोचना बिलकुल ही गलत है।

लालटेनें जला दी गईं और हम लोग फावड़े और कुदालें लेकर ज़मीन खोदने के काम में जुट गए। जिस मेहनत से हम वह ज़मीन खोद रहे थे, उस मेहनत को देख-देख मैं मन ही मन सोच रहा था कि कितना अच्छा होता अगर यह शक्ति हम किसी सत्कार्य में लगाते। लालटेनों की रोशनी हमारे शरीर और हमारे औज़ारों पर जिस तरह पड़ रही थी, उस दृश्य को देख मुझे ख्याल आया कि यदि इस प्रकार हमें कोई बाहर का आदमी ज़मीन खोदते देख ले तो उसे कितना संदेह होगा और वह हमारे सम्बन्ध में न जाने क्या सोच बैठेगा।

दो घंटे हम लगातार खुदाई के काम में लगे रहे। इस बीच बातचीत बिलकुल नहीं हुई। हमारी परेशानी का मुख्य कारण था, कुत्ते का भौंकना। वह भौंक-भौंककर हमारे काम में बड़ी रुचि दिखला रहा था। कुछ देर बाद तो वह बड़े ज़ोर-ज़ोर से भौंकने लगा। लेग्राण्ड को यह शंका होने लगी कि कहीं आसपास से गुज़रता हुआ आदमी कुत्ते के भौंकने की आवाज़ सुनकर इधर न आ जाए। जहां तक मेरा सम्बन्ध था, मैं तो ऐसी किसी भी बाधा से खुश ही होता जिससे लेग्राण्ड को घर वापस चलने के लिए विवश होना पड़ता। जुपिटर ने कुत्ते के मुंह को कपड़े से बांधकर उसे वृक्ष के तने से बांध दिया। इससे कुत्ते का भौंकना बंद हो गया और वह हंसता हुआ फिर खोदने के काम में जुट गया।

दो घंटे बीत गए। हम पांच फुट अन्दर तक ज़मीन खोदते चले गए। लेकिन खज़ाने का कहीं कोई निशान नहीं दिखलाई पड़ा। जब

काम रुक गया तो मैं आशा करने लगा कि अब यह तमाशा खत्म हो जाएगा। लेकिन लेग्राण्ड अभी हतोत्साह नहीं हुआ था। उसने भौंहों पर आए पसीने को पोंछा और फिर खोदने के काम में लग गया। हमने चार गज़ वाले सारे गोल इलाके को खोद डाला था और अब हमने दो फीट और गहरा खोद लिया था। फिर भी कुछ दिखलाई नहीं पड़ा। सोने की खोज करने वाला मेरा मित्र गड्ढे से ऊपर आ गया। मुझे उसे देखकर बड़ी दया आ रही थी। उसके चेहरे पर निराशा की कटु मुद्रा अंकित थी। चुपचाप कदम रखते हुए वह वृक्ष के उस स्थान पर पहुंचा जहां खुदाई का काम आरम्भ करने के पूर्व उसने कोट उतारकर पटक दिया था। कोट पहनकर वह तैयार हो गया। इस बीच में उसने अपने मुंह से एक शब्द भी नहीं निकाला। जुपिटर ने इशारा पाकर औज़ार बटोरने शुरू कर दिए। इस काम के हो जाने के बाद कुत्ते के मुंह से कपड़ा निकालकर उसे मुक्त किया गया, और हम लोग गम्भीर और मूक वातावरण में घर जाने के लिए घूम पड़े।

अभी हम लोग मुश्किल से दस-बारह कदम भी न चले होंगे कि मुझे लेग्राण्ड की गालियों भरी आवाज़ सुनाई पड़ी। लेग्राण्ड जुपिटर पर चढ़ा हुआ था। मालिक ने नौकर की गर्दन पकड़ रखी थी। चकित हो जाने के कारण नीग्रो की आंखें और मुंह—दोनों ही पूरे खुल गए थे। उसके हाथ से कुदाल-फावड़े सब गिर गए थे और वह घुटनों के बल ज़मीन में गिरा हुआ था।

"अबे ओ गधे!" लेग्राण्ड ने दांत किटकिटाते हुए कहा, "काले नारकीय दुष्ट!—बोल, तुरन्त बोल तेरी बाईं आंख कौन-सी है? ठीक-ठीक बता! बात बनाने की कोशिश मत करना।"

"अरे भगवान्! मासा विल, मेरी बाईं आंख यह है।" और यह कहते हुए उसने अपना हाथ अपनी दाहिनी आंख पर रख लिया। वह अपनी आंख पर अपना हाथ ऐसे रखे था जैसे उसे मालिक का मुक्का अपनी आंख पर ही पड़ने का खतरा हो।

"मेरा भी यही ख्याल था—मैं जानता था! हुर्रा!" लेग्राण्ड ने नीग्रो की गर्दन छोड़ते हुए कहा। इस बीच मालिक की पकड़ से मुक्त नौकर आश्चर्यचकित आंखों से कभी मेरी ओर तो कभी अपने मालिक की ओर देख रहा था। वह जमीन से उठकर तो पहले ही खड़ा हो गया था।

"आइए, हम लोग वापस चलें! अभी खेल खतम नहीं हुआ है।" यह कहते हुए लेग्राण्ड हमें फिर ट्यूलिप के पेड़ के पास ले चला।

जब हम पेड़ के नीचे तने के पास पहुंच गए तो उसने नीग्रो को बुलाया, "जुपिटर!" और उसने पूछा, "यहां आओ। मुझे बताओ कि खोपड़ी का मुंह डाल के अन्दर की तरफ था या बाहर की तरफ।"

"बाहर की तरफ मालिक, जिससे कौऐ आंख तक भलीभांति बिना किसी तकलीफ के पहुंच सकें।"

"अच्छा, तो तुमने कीड़े को इस आंख से या उस आंख से नीचे गिराया था?" दोनों आंखों पर बारी-बारी से हाथ रखते हुए लेग्राण्ड ने फिर प्रश्न किया।

"इस आंख से, बाइं आंख से, जैसा आपने कहा था," अपनी दाहिनी आंख की ओर इशारा करते हुए जुपिटर ने उत्तर दिया।

"ठीक है। हमें फिर खोदना पड़ेगा।"

मेरे मित्र ने कीड़े गिरने के स्थान पर जो खूंटा गाड़ा था, उसे उखाड़ लिया। इसके बाद उसे तीन इंच पश्चिम में लेजाकर गाड़ दिया। इसके बाद फीते को वृक्ष के तने से बांध और खूंटे तक लेजाकर फिर पचास फुट तक की खूंटे की सीध में दूरी नापी। यह जगह पहले स्थान से कई गज दूर थी। मुझे ऐसा लगा कि मेरे मित्र के पागलपन में कुछ अक्ल की बात है।

इस बार लेग्राण्ड ने पहले से कहीं अधिक बड़े आकार का गोला खींचा। हम लोग फिर खोदने के काम में जुट गए। मैं थककर चूर हो

गया था। पता नहीं क्या कारण था कि मेरे विचार बदल गए थे और बिना किसी नानुच के मैंने खुशी-खुशी खोदना शुरू कर दिया। पता नहीं क्यों, मुझे इस कार्य में अब रुचि उत्पन्न हो गई थी। मित्र के असाधारण कार्य-कलाप में भी मुझे कुछ पूर्व विचार और पूर्व नियोजन-सा दिखलाई पड़ने लगा था। इस कारण मैं बड़ा प्रभावित हो गया था। मैंने जल्दी-जल्दी खोदना शुरू किया; और बराबर यह देखता जा रहा था कि कुछ खजाने जैसी चीज़ दिखलाई पड़े। हम इसी प्रकार के विचार में डूबे कोई डेढ़ घंटे तक खोदते रहे कि कुत्ते के भौंकने की आवाज ने हमारी विचार-शृंखला भंग कर दी। पहले तो उसके भौंकने को हमने उछल-कूद का फल ही समझा लेकिन अब वह जिस ढंग से भौंक रहा था, उससे लगता था कि अवश्य ही कोई गंभीर बात होने वाली है।

जुपिटर ने जब उसे बांधने की कोशिश की तो उसने पंजों से छुड़ा लिया और कूदकर गड्ढे में पहुंच गया और वहां मिट्टी में मुंह गड़ाकर उसने एक धक्के में ही मानव-अस्थियों का ढेर इधर-उधर बिखेर दिया। ये हड्डियां दो आदमियों की थीं। इनमें धातु के कई बटन मिले थे और कुछ मिट्टी भी जो ऊनी कपड़ों जैसी लग रही थी। दो-एक फावड़े और लगाने पर एक स्पेनिश छुरा निकला। और खोदने पर तीन या चार सोने और चांदी की मुद्राएं निकलीं।

इन सबको देख, जुपिटर से अपनी प्रसन्नता छिपाए नहीं छिप रही थी, लेकिन उसके मालिक के चेहरे से अब भी निराशा ही झलक रही थी। लेग्राण्ड ने हम लोगों से काम जारी रखने को कहा। कुछ ही देर में मेरे जूते एक लोहे के छल्ले से उलझ गए और उसमें उलझकर मुझे गिरते देख सब अवाक् रह गए। यह छल्ला जमीन में आधा घुसा था।

अब हम और भी मेहनत से काम करने लगे। ऐसे उत्तेजनापूर्ण दस मिनट मैंने अपने जीवन में कभी व्यतीत नहीं किए थे। इन दस मिनटों में हमने एक लकड़ी का बड़ा सन्दूक खोद निकाला। यह

बड़ा मजबूत था और इतने दिनों तक जमीन में बंद रहने के बाद भी उसका कुछ नहीं बिगड़ा था। ऐसा लगता था कि उसपर गाड़ने के पहले बाईक्लोराइड आफ मरकरी का लेप कर दिया था। यह सन्दूक कोई साढ़े तीन फीट लम्बा और तीन फीट चौड़ा था। उसकी गहराई ढाई फीट रही होगी। इसके ऊपर-नीचे चारों तरफ काष्ठकला का काम था। पूरा सन्दूक लोहे की पत्तियों से जड़ा हुआ था। सन्दूक के चारों ओर और ऊपर की तरफ छल्ले लगे थे। इन छल्लों की सहायता से छह आदमी मजबूती से सन्दूक को पकड़ सकते थे। हमने जब बहुत कोशिश की तो सन्दूक जरा-सा खिसका। यह समझ में आते देर नहीं लगी कि समूचे सन्दूक को हटाना करीब-करीब असंभव है। सौभाग्य से लोहे की पत्तियों पर दो बोल्ट लगे थे जो खुल सकते थे। हमने उन्हें खोल डाला। उनके खुलते ही सन्दूक खुल गया। क्षण भर में ही हमारे सामने अपार रत्न-राशि चमचमाने लगी—ऐसा खजाना, जिसका मूल्य आंकना भी हमारे लिए कठिन था। लालटेनों की रोशनी के सामने पड़ा सोना और हीरे-मोती इस तरह जगमगा रहे थे कि उनपर नजर नहीं टिकती थी।

मैं उन भावनाओं को छिपाने की कोशिश नहीं करूंगा जो मेरे मन में वह खजाना देखकर उत्पन्न हो रही थीं। आश्चर्य का भाव इनमें सबसे अधिक था। लेग्राण्ड तो उत्तेजनावश क्लान्त हो गया था और उसके मुंह से एक शब्द भी नहीं निकल रहा था। कुछ देर खजाने के बारे में सोचकर और उसके मूल्य का अनुमान कर, जैसा कि नीग्रो के लिए स्वाभाविक ही है, जुपिटर का मुंह बिलकुल पीला पड़ गया था। वह स्तब्ध था, ऐसा लगता था कि उसपर बिजली गिर पड़ी हो। कुछ देर बाद वह संदूक के अन्दर लुढ़क गया और सोने तथा हीरे-मोतियों को उसने ऐसे लिपटा लिया जैसे उनमें नहा रहा हो। अन्त में गहरी सांस छोड़ते हुए स्वगत बोला :

'और यह सब हमें उसी सुनहले कीड़े की बदौलत मिला है, ब सूरत सुनहले कीड़े की बदौलत। उसी कीड़े की बदौलत, जिससे

मैं इतनी घृणा करता था उसे बुरा-भला कहता था और ठुकराता था। बुड्ढे नीग्रो, क्या तुझे अपने ऊपर लज्जा नहीं आती? बतला।'

अन्त में मुझे यह आवश्यक जान पड़ा कि मैं नौकर और मालिक दोनों से कहूं कि अब यहां सबसे पहला काम खजाना हटाना है। देर हो रही थी और सुबह के पहले खजाना हटाने का काम पूरा हो जाना जरूरी था। लेकिन तरह-तरह के विचारों के कारण हम यह तय ही नहीं कर पा रहे थे कि क्या किया जाए। हम लोगों ने दो तिहाई सामान सन्दूक से निकाल लिया। तब कहीं बड़ी मुश्किल से सन्दूक को गड्ढे से बाहर कर सके। जो सामान बाहर निकाल लिया था, वह घास में छिपा दिया जिससे किसी को दिखलाई न पड़े और जुपिटर ने कुत्ते को समझा दिया कि वह न तो उस स्थान से हमारे लौटने तक हटे और न अपना मुंह ही खोले।

इसके बाद सन्दूक लादकर हम तेजी से घर की तरफ चले। कड़ी मेहनत के बाद हम घर तो पहुंच गए लेकिन रात का एक बज गया था और हम सब बहुत ही थक गए थे। तुरन्त ही कुछ भी काम करने की हिम्मत नहीं थी। दो बजे तक हम लोगों ने भोजन करके आराम किया और इसके बाद फिर पहाड़ी की ओर रवाना हो गए। साथ में तीन बड़े-बड़े झोले भी हमने ले लिए। सौभाग्यवश ये घर में पड़े थे। निश्चित स्थान पर कोई चार बजे सवेरे पहुंचने के बाद हीरे-जवाहरातों को झोलों में भरकर हम फिर लौट पड़े। गड्ढों को बिना भरे ही छोड़ दिया। दूसरी बार जब घर आकर हमने अपने-अपने झोलों से सारी दौलत एक जगह इकट्ठी की तो पूर्व में पेड़ों के ऊपर सुबह की सफेदी फूट चुकी थी।

अब हम लोगों में जरा भी दम नहीं था। लेकिन उत्तेजना इतनी थी कि जरा भी आराम नहीं कर पा रहे थे। तीन-चार घंटे सोने के बाद हम सब खजाने की परीक्षा करने ऐसे उठ बैठे जैसे यह सब कुछ पहले ही तय कर चुके हों।

अब संदूक फिर मुंह तक भरा था। दिन भर और रात बीते देर तक हम संदूक की हर चीज देखते रहे। कोई व्यवस्था या क्रम नहीं था। हर चीज बेतरतीब ढेर में पड़ी थी। हमने हर चीज को पहले ध्यान से देखा। छांटने के बाद पता लगा कि अनुमान से कहीं अधिक दौलत हमारे हाथ लगी है। जो अशरफियां मिली थीं उनका मूल्य कोई साढ़े चार लाख डालर था। यह हिसाब हमने उस समय अब के मूल्य के आधार पर लगाया था। चांदी तो रत्तीभर नहीं थी। जितनी मुद्राएं थीं, वे सबकी सब सोने की थीं। सारी स्वर्ण-मुद्राएं पुरानी थीं और भिन्न-भिन्न देशों की थीं। फ्रांस, स्पेन, जर्मनी और कुछ इंगलैंड के सिक्के भी थे। कुछ मोहरों पर अंकित छापों को तो हम पहचान ही नहीं सके। वैसे सिक्के हमने पहले कभी देखे ही नहीं थे। कई सिक्के तो बड़े भारी थे, आकार में भी बहुत बड़े थे। इनके ऊपर का भाग बहुत घिस गया था, इसलिए हम उनपर अंकित शब्द भी पढ़ नहीं सके। एक भी अमरीकन मुद्रा नहीं थी। जो हीरे-जवाहरात मिले थे, उनके मूल्य का अनुमान करना तो और भी कठिन था। कुछ हीरे थे, जो बहुत ही आभावान और बहुत बड़े-बड़े थे; इनकी संख्या एक सौ दस थी। इनमें से एक भी छोटा नहीं था। अठारह चमकदार लाल थे। तीन सौ दस पन्ने थे। सभी बड़े खूबसूरत थे। इक्कीस नीलम थे। इन सब रत्नों को गहनों से तोड़कर संदूक में भर दिया गया। इसके बाद आभूषणों के बचे सोने को हथौड़ों से इतना कूटा गया था कि उन्हें पहचाना न जा सके। फिर भी कुछ आभूषण थे। ये सब ठोस सोने के थे। दो सौ भारी अंगूठियां और कर्णफूल थे। यदि मैं भूला नहीं हूं तो तीस भारी-भारी सोने की चेनें थीं। तिरासी ऐसे बड़े भारी-भारी पत्तर थे जिनपर ईसा शूली पर चढ़े दिखलाए गए थे। शराब पीने का एक बहुत बड़ा चषक था; इसपर पुराने जमाने के वीरों के चित्र खुदे थे, और अंगूर की बेल का काम था। दो तलवारों के बढ़िया काम वाले सोने के हत्थे थे। इसके अलावा और भी छोटी-छोटी बहुत-सी चीजें थीं। अब मुझे उनके नाम या संख्या ठीक-ठीक याद नहीं

हैं। इन आभरणों का वजन तीन सौ पचास पौण्ड था। इस वजन में मैंने एक सौ सत्तानवे बढ़िया सोने की घड़ियों को नहीं गिना है। इनमें से तीन का मूल्य तो पांच-पांच सौ डालर था। लेकिन बहुत-सी पुरानी हो गई थीं और वे चल नहीं सकती थीं। उनके यंत्र जमीन में दबे रहने के कारण खराब हो गए थे, उनमें जंग लग गई थी। लेकिन सब में कीमती हीरे लगे थे और इस दृष्टि से वे घड़ियां काफी मूल्यवान थीं।

उस रात जब हमने संदूक की सारी सम्पत्ति का अन्दाजा लगाया तो पता लगा कि वह कोई पन्द्रह लाख डालर है। बाद में कुछ चीजों को छोड़कर जब हमने उसे बेचा तो हमें ज्ञात हुआ कि हमारा यह अनुमान चीजों के वास्तविक मूल्य से कम था। (कुछ आभूषण और रत्न हमने अपने उपयोग के लिए रख लिए थे।)

जब हमने खजाने की जांच का काम समाप्त कर लिया और कुछ समय बाद इतनी बड़ी राशि मिलने की उत्तेजना भी कम हो गई तो लेग्राण्ड ने देखा कि मैं यह जानने के लिए बड़ा ही अधीर हूं कि आखिर गुप्त खजाने का पता उसे कैसे लगा। इस बीच मैं अपनी जिज्ञासा कई बार प्रकट कर चुका था।

लेग्राण्ड ने कहा, "आपको याद है, उस रात जब मैंने आपको एक कागज पर सुनहले कीड़े का चित्र बनाकर दिया था तो आपने कहा था कि मेरा चित्र मरे आदमी की खोपड़ी के कंकाल से मिलता है। इस बात से मुझे बड़ी झुंझलाहट हुई थी। आपने जब पहली बार यह बात कही तो मैंने समझा था कि आप मजाक कर रहे हैं। लेकिन बाद में कीड़े की पीठ के काले निशानों का स्मरण मुझे हो आया और इनकी वजह से मुझे ख्याल हुआ कि आपकी टिप्पणी में कुछ तथ्य अवश्य हैं। इतने पर भी अपने चित्र का उपहास देख मुझे बुरा लगा, क्योंकि मैं अपने आपको अच्छा-खासा चित्रकार समझता हूं। इसलिए जब आपने कागज मुझे वापस दिया तो मैं उसे नाराजगी की वजह से तोड़-मोड़कर आग में फेंक देना चाहता था।"

"क्या तुम्हारा मतलब उसी कागज़ के टुकड़े से है, जिसपर तुमने कीड़े का चित्र बनाया था?"

"हां, लेकिन वह देखने में ही कागज़ लगता था। पहले मैंने भी उसे कागज़ ही समझा था लेकिन जब मैंने उसपर पेंसिल चलाई तो पता लगा कि वह बहुत पतला गटापारचा है। वह बड़ा गन्दा था, यह तो आपको भी याद ही होगा। लेकिन जब मैं कागज़ तोड़ने-मरोड़ने जा रहा था तो उसी समय मुझे भी कीड़े के चित्र वाली जगह पर खोपड़ी दिखलाई पड़ी। आप कल्पना कर सकते हैं, उस समय मुझे कितना आश्चर्य हुआ होगा। क्षण भर के लिए मुझे ऐसा लगा कि मैं ठीक-ठीक सोच नहीं पा रहा हूं। मैं जानता था कि जो चित्र मैंने बनाया था, वह इस खोपड़ी से नहीं मिलता था, हालांकि दोनों की रूपरेखा में कुछ समानता अवश्य थी। मैं उसी समय एक कुर्सी और मोमबत्ती लेकर कमरे के किनारे वाली एक खिड़की के पास बैठ गया।

मैंने जब गटापारचा वाला कागज़ उलटकर देखा तो उसपर मेरा बनाया चित्र ज्यों का त्यों था। मेरे ऊपर जो पहली प्रति-क्रिया हुई, वह मात्र आश्चर्य की थी। क्योंकि वह खोपड़ी और मेरा चित्र दोनों आकार-प्रकार में बहुत अधिक मिल रहे थे। जिधर मैंने चित्र बनाया था, ठीक उसके दूसरी तरफ खोपड़ी का चित्र रहा होगा। लेकिन इस संयोग से मैं कुछ क्षणों के लिए अवाक् रह गया। इस प्रकार की घटनाओं का मस्तिष्क पर शुरू-शुरू में यही असर पड़ा करता है। उस समय मस्तिष्क कार्य और कारण के बीच सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न करता है और जब इसमें सफलता नहीं मिलती तो कुछ देर के लिए उसे एक प्रकार का लकवा-सा मार जाता है और उस समय वह कुछ सोच नहीं सकता। लेकिन कुछ समय बाद जब यह स्थिति समाप्त हुई तो वस्तुस्थिति मेरी समझ में आई, लेकिन इस वस्तुस्थिति की अनुभूति और भी अधिक चौंका देने वाली थी। मुझे धीरे-धीरे यह बिलकुल स्पष्ट याद आ गया कि जब

मैंने कीड़े का चित्र बनाया था तो उस समय मुझे खोपड़ी या अन्य कोई शक्ल नहीं दिखलाई पड़ी थी। मुझे यह भी स्मरण था कि कीड़े की शक्ल बनाने के लिए मैंने उस कागज़ को इसलिए कई बार उलटा-पलटा था कि चित्र के लिए अधिक साफ जगह मिल जाए। यदि उस गटापारचा वाले कागज़ पर खोपड़ी की शक्ल होती तो मैं उसे अवश्य देखता। यह रहस्य था जो मेरी समझ में नहीं आ रहा था। लेकिन उस समय भी मेरे अंधकारमय मानस के कोने में दूर सत्य का जुगनू क्षीण आभा लिए चमक रहा था, जिसका शानदार प्रदर्शन कल रात के अभियान में आपने देखा। मैं तत्काल उठ खड़ा हुआ। गटापारचा उठाकर मैंने रख लिया और निश्चय कर लिया कि इस सम्बन्ध में आगे एकान्त में विचार करूंगा।

"जब आप चले गए और जुपिटर नींद में गहरे खर्राटे भरने लगा तो मैंने उस गटापारचा वाले कागज़ की विधिवत् परीक्षा शुरू की। सबसे पहले तो मैंने यह सोचा कि यह कागज़ मेरे हाथ में आया कैसे? हमें वह सुनहला कीड़ा मुख्य स्थल के समुद्र तट पर, द्वीप से एक मील पूर्व, जल से कुछ ही दूरी पर मिला था। मैंने कीड़े को उठा लिया। उठाते ही उसने मुझे ज़ोर से काट खाया। पीड़ा के कारण वह मेरे हाथ से छूटकर गिर गया। जुपिटर ने सावधानी की। अपनी आदत के अनुसार इधर-उधर किसी पत्ती या ऐसी ही किसी चीज़ के लिए नज़र दौड़ाई, जिससे वह कीड़े को पकड़ सके। कीड़ा उड़-कर तब तक उसके पास पहुंच गया था। तभी हम लोगों की निगाह उस गटापारचे के टुकड़े पर पड़ी जिसे मैंने उस समय कागज़ का टुकड़ा मात्र समझा था। यह रेत में दबा पड़ा था और इसका केवल एक भाग ऊपर दिखलाई पड़ रहा था। इसी कागज़ के पास हमें नाव के टूटे हिस्से भी दिखलाई पड़े। यह नाव किसी जहाज़ की रही होगी। ऐसा लगता है कि नौका के ये अवशेष वहां काफी दिन से पड़े थे, क्योंकि नाव की लकड़ी को भी पहचानना मुश्किल था।

"अच्छा तो फिर जुपिटर ने वह गटापारचा उठा लिया और

उसमें कीड़ा लपेटकर मुझे दे दिया। कुछ ही देर बाद हम लोग घर लौट पड़े। रास्ते में हमें लेफ्टीनेन्ट जी० मिले। मैंने उनको वह कीड़ा दिखलाया। उन्होंने यह इच्छा प्रकट की कि वे कीड़े को अपने साथ किले में ले जाना चाहते हैं। मेरे सहमति प्रकट करते ही उन्होंने कीड़े को कागज़ से उठाकर अपनी वास्केट की जेब में डाल लिया। उन्होंने गटापारचा वाला कागज़ मेरे ही हाथ में छोड़ दिया जिसमें मैंने कीड़ा पकड़ा था। उन्हें यह शक था कि कहीं मैं फिर मना न कर दूं। इसलिए उन्होंने मेरे हां करने के बाद कीड़ा जेब में रखने में अधिक समय नहीं गंवाया। आप तो जानते ही हैं कि प्रकृति विज्ञान के इतिहास में वे कितनी अधिक दिलचस्पी रखते हैं। ऐसा लगता है, उसी समय, अवचेतन मानसिक अवस्था में मैंने वह गटापारचा अपनी जेब में डाल लिया होगा।

"आपको याद होगा, जब मैंने अपनी मेज़ देखी जहां कागज़ रखा रहता है, तो वहां कोई कागज़ न मिला। उसके बाद जब दराज़ खोली तो उसमें भी कागज़ नहीं निकला। मैंने अपनी जेब देखी, शायद उसमें कोई पुराना पत्र निकल आए, तब जेब से यह गटापारचा निकल आया। इस प्रकार मैंने यह जान लिया कि यह कागज़ या गटापारचा मेरे कब्ज़े में किस तरह आया।

"आप कह सकते हैं कि मेरा सोचना बेपर की उड़ान था किंतु मेरे मस्तिष्क में गटापारचा को लेकर एक विचार घर कर गया था। मेरे पास शृंखला की दो कड़ियां थीं। समुद्र तट पर एक नौका का ध्वंसावशेष पड़ा था। उस नौका के पास ही यह गटापारचा मिला, जिसपर खोपड़ी का चित्र बना हुआ है।

आप पूछिएगा—इन दोनों के बीच सम्बन्ध क्या है? मेरा उत्तर है, खोपड़ी समुद्री डाकुओं का बहुत पुराना निशान है। हर जलयुद्ध में समुद्री डाकू मुर्दा खोपड़ी की पताका ही फहराते हैं।

"मैं कह चुका हूं कि कागज़ गटापारचा था, और गटापारचा पानी में गलता नहीं है, यों कहिए नष्ट होता ही नहीं है। गटापारचा

पर मामूली चीज़ें नहीं लिखी जातीं क्योंकि मामूली चिट्ठियों या शक्लों को गटापारचा के कागज़ पर बनाना बड़ा कठिन है। लगातार विचार करने का यह फल निकला कि इस खोपड़ी की शक्ल में कोई रहस्य ज़रूर है। गटापारचा और लम्बा होगा लेकिन उसका एक कोना नष्ट हो गया था। इसके आकार से ऐसा लगता था कि उसपर जो कुछ लिखा गया है, वह याददाश्त के लिए है—काफी समय तक सुरक्षित रखने के लिए है।"

"लेकिन," मैंने पूछा, "आप तो कह रहे थे कि कीड़े की शक्ल बनाने के पहले गटापारचे पर कोई शक्ल थी ही नहीं। तो फिर उस नाव तथा खोपड़ी के बीच आपने कैसे सम्बन्ध स्थापित कर लिया क्योंकि आपकी बातों में ऐसा लगता है कि आपके कीड़े की शक्ल बनाने के बहुत पहले किसी ने खोपड़ी की शक्ल बनाई होगी?"

"आह, यहीं तो सारा भेद खुल जाता है। यद्यपि यह बड़ा रहस्यमय था लेकिन मुझे इसके जान लेने में कोई विशेष कठिनाई नहीं हुई। मेरी विचार-सरणी निश्चित थी और फलतः उसके परिणाम भी निश्चित थे।

"मैंने इस प्रकार तर्क किया : जब मैंने कीड़े की शक्ल बनाई उस समय ऊपर से किसी मुर्दा खोपड़ी की शक्ल नहीं दिखलाई पड़ती थी। मैंने शक्ल बनाकर गटापारचा आपको दे दिया। मैं आपको उस समय तक ध्यान से देखता रहा, जब तक आपने वह गटापारचा मुझे वापस नहीं कर दिया। इसलिए आपने तो खोपड़ी की शक्ल बनाई नहीं। अन्य कोई व्यक्ति वहां उपस्थित नहीं था; तो शक्ल किसी आदमी ने मेरे सामने नहीं बनाई। फिर भी वह अपनी जगह पर थी।

"यहां मैंने बीच के समय की हर घटना पर विचार किया और हर चीज़ मुझे साफ-साफ याद आ गई। उस दिन बड़ी ठंड थी (कैसा सुखद संयोग था) और कमरे में आतिशदान में खूब तेज़ आग जल रही थी। मैं बाहर से घूमकर आया था और मुझे साधारण से अधिक

गरमी लग रही थी। इसलिए मैं तो मेज़ के पास बैठा लेकिन आप आतिशदान के पास बैठे थे। जैसे ही मैंने आपको गटापारचा वाला कागज़ दिया कि कुत्ता आ गया। कुत्ता देखते ही मैं आपके पास आ गया। आप बाएं हाथ से तो उसे पुचकारते रहे लेकिन आपके दाहिने हाथ से कागज़ आपके घुटनों पर गिर गया। आपका यह हिस्सा आग के बराबर था। एक बार तो ऐसा लगा कि वह कागज़ आग में ही गिर जाएगा लेकिन मेरे चेतावनी देने के पूर्व ही आपने उसे थाम लिया और कुछ क्षणों बाद उसे देखना शुरू कर दिया। जब मैंने पूरी घटना पर विचार किया तो मुझे यह जानने में अधिक समय न लगा कि आग की गरमी के कारण ही वह खोपड़ी की शक्ल उभर आई जिसे पहले आपने और बाद में मैंने देखा था। आप उन रासायनिक घोलों को तो जानते ही हैं जिनसे कागज़ या गटापारचे पर कुछ भी लिखा जा सकता है, जो कुछ देर बाद लुप्त हो जाता है; किन्तु गर्म करने पर उसमें लिखी चीज़ें पुनः पढ़ी जा सकती हैं। जाफरी को चौगुने ऐक्वा रेजिया (एक विशेष प्रकार का घोल) में मिलाने से हरी स्याही तैयार हो जाती है। स्पिरिट्र नाइट् में कोबाल्ट का चूरा मिला देने से लाल रंग की स्याही बन जाती है। आप इन स्याहियों से जो कुछ लिखेंगे वह स्याही सूखने के बाद गायब हो जाता है लेकिन अगर उस कागज़ या वस्तु को आग पर गरम कर लें तो लिखा हुआ मसौदा आप पढ़ सकते हैं।

"अब मैंने खोपड़ी की शक्ल की जांच आरम्भ की। शक्ल की बाह्य रेखाएं जो गटापारचे के छोर के समीप थीं, बीच की रेखाओं से अधिक स्पष्ट और उन्नत थीं। इससे प्रकट होता था, केलोरिक का प्रभाव (या दूसरे शब्दों में स्याही का घोल) सब ओर बराबर नहीं था। मैंने आग जलाकर गटापारचे का हर भाग खूब गरम किया। शुरू में तो खोपड़ी की ही शक्ल और स्पष्ट होती गई, लेकिन बाद में प्रयोग बराबर करते जाने के परिणामस्वरूप, खोपड़ी की शक्ल के नीचे छोटी-सी बकरी की शक्ल दिखलाई पड़ी; और अधिक ध्यान से

देखने पर पता लगा कि यह बकरी का बच्चा है। इसे अंग्रेज़ी में 'किड' कहते हैं।"

"हा! हा!" मैंने ज़ोर से हंसते हुए कहा, "मुझे तुम्हारी बात पर हंसने का कोई अधिकार नहीं है क्योंकि पन्द्रह लाख डालर (कोई सवा दो करोड़ रुपये का खज़ाना) हंसी की बात नहीं है, परन्तु मैं समझता हूं कि तुम कम से कम इसे अपनी विचार-श्रृंखला की तीसरी कड़ी—यह तो नहीं ही बतलाओगे क्योंकि डाकुओं और बकरियों में कोई सम्बन्ध नहीं है, बकरियां तो किसान या खेती-बारी से ही सम्बन्धित होती हैं।"

"लेकिन मैंने अभी कहा न," लेग्राण्ड बोला, "शक्ल बकरी की नहीं, बकरी के बच्चे या 'किड' की थी।"

"ठीक है! बकरी या उसके बच्चे में क्या भेद है? दोनों करीब-करीब एक ही तो हैं।"

"जी हां, करीब-करीब एक हैं। लेकिन बिलकुल एक तो नहीं हैं।" लेग्राण्ड ने कहा, "आपने शायद समुद्री दस्यु कैप्टन किड का नाम सुना होगा। मैंने बकरी के बच्चे की शक्ल को कैप्टन किड के गुप्त हस्ताक्षर मान लिया। मैं हस्ताक्षर इसलिए कहता हूं क्योंकि बकरी के बच्चे की शक्ल हस्ताक्षरों की जगह ही बनी हुई थी। खोपड़ी की शक्ल ठीक ऊपर उस जगह थी जहां सील लगाने का स्थान होता है। लेकिन दोनों के बीच कोई मसौदा न पाकर मुझे बड़ी निराशा हुई।"

"आप शायद सील (मोहर) और हस्ताक्षर के बीच पत्र का मसौदा पाने की आशा कर रहे थे?"

"हां, इसी तरह की कोई चीज़ मिलने की मुझे आशा थी। सच तो यह है कि मुझे बहुत बड़ा खज़ाना मिलने की उम्मीद हो चली थी। कारण मैं नहीं बता सकता। संभवतः यह मेरा विश्वास नहीं, मेरी अभिलाषा थी। इसके अलावा आपको जुपिटर की वह मूर्खतापूर्ण बात तो शायद याद ही होगी कि 'यह कीड़ा ठीक सोने का है।' इन

शब्दों का भी मेरे ऊपर अजीब-सा प्रभाव पड़ा था। एक के साथ एक ऐसे संयोग आते चले गए जो बड़े ही असाधारण थे। आपने यह संयोग देखा कि जिस दिन आप आए और यह कागज़ मिला उसी दिन इतनी ठंड पड़ी कि घर में आग जलाने की ज़रूरत पड़ी और फिर कुत्ते का आना, उसका आपके पास खेलना, कागज़ का गिरकर आग के पास पड़ा रहना, ये सब संयोग ही तो थे। यदि कागज़ आगे पास रहकर गरम न हुआ होता तो हमें यह खोपड़ी दिखलाई ही न पड़ती और फलतः खज़ाना भी न मिलता।"

"ठीक है। आग का किस्सा बतलाओ। मैं उसे सुनने के लिए अधीर हूं।"

"हां, हां, लीजिए बताता हूं। आपने ऐसी हज़ारों जनश्रुतियां और कहानियां निस्संदेह सुनी होंगी जिनका मूलभाव यह है कि कैप्टन किड और उसके साथियों ने अटलांटिक तट पर कहीं कोई बहुत बड़ा खज़ाना गाड़ रखा है। इन जनश्रुतियों में कुछ न कुछ तथ्य अवश्य रहा होगा। जिस तरह यह कहानियां बराबर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक आईं, उससे स्पष्ट था कि खज़ाना कहीं अवश्य छिपा है और इनका वास्तविकता से कुछ सम्बन्ध अवश्य है। यदि किड ने खज़ाने को एक बार गाड़कर इसे फिर खोद निकाला होता तो ये अफवाहें बिना किसी परिवर्तन के इस रूप में हम तक नहीं पहुंचतीं। आप देखिएगा कि जा भी कहानी कही जाती है, वह खज़ाना तलाश करने वाले के बारे में होती है, खज़ाना पा लेने वाले के सम्बन्ध में नहीं। यदि किसी भी जलदस्यु ने खज़ाना पा लिया होता तो सारा किस्सा वहीं खत्म हो जाता।

"मुझे ऐसा लगता है कि किसी दुर्घटनावश यह गटापारचा उनसे खो गया। परिणाम यह हुआ कि खज़ाना किस जगह गड़ा है, इसका उन्हें ज्ञान न रहा। किड के साथियों को इस दुर्घटना का पता बाद में लगा होगा क्योंकि यदि वह कागज़ न मिलता तो उन्हें खज़ाने के बारे में कभी कुछ भी न मालूम पड़ता। उन्होंने न

खज़ाने को वापस पाने के लिए बड़ी कोशिशें की होंगी और उनके असफल परिणामों के कारण ही वे कथाएं प्रचारित हो गई होंगी जो आज हम सुनते हैं। आप ही बतलाइए—आज तक आपने कोई ऐसी कहानी सुनी है जिसका मुख्य आशय यह हो कि अटलांटिक तट पर कोई खज़ाना किसी को मिला है?"

"कभी नहीं, ऐसी कोई कहानी मैंने कभी नहीं सुनी।"

"लेकिन यह तो सभी जानते हैं कि किड के पास अपार सम्पत्ति थी। अतएव मैंने बिना ज़्यादा खोजबीन किए यह मान लिया कि वह गुप्त निधि अब भी भूमि में कहीं छिपी है। और आपको आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि उस कागज़ के मिलने से मुझे यह आशा बंध गई और इसे मैं करीब-करीब निश्चित बात ही मानने लगा कि खज़ाने का पता मुझे मिल गया है। वही पता, जो किड और उसके साथियों से खो गया था।"

"लेकिन आपने वह पता पढ़ा कैसे?"

"मैंने कागज़ को और गरम किया लेकिन उसका कोई फल नहीं हुआ। कागज़ पर फिर भी कुछ न उभरा। मुझे ख्याल आया कि शायद धूल बहुत अधिक जम जाने के कारण गरमी का कोई असर नहीं हो रहा है। मैंने गटापारचे के कागज़ पर गरम पानी छोड़ा। इसके बाद टीन का एक चौड़ा बर्तन चूल्हे के अंगारों पर रख दिया। कुछ मिनटों में वह खूब गरम हो गया। इसके बाद वह कागज़ मैंने उसी बर्तन में बिछा दिया। कुछ देर बाद जब मैंने कागज़ हटाया तो उसमें कुछ पंक्तियां उभर आते देख मेरे हर्ष की सीमा न रही। ये अंक थे और पंक्ति-बद्ध थे; साफ नहीं थे। इसलिए मैंने कागज़ उस बर्तन में फिर रख दिया। कुछ देर बाद दुबारा उठाने पर मुझे ये अंक दिखलाई पड़े।"

लेग्राण्ड ने पुनः कागज़ गरम करके मुझे देखने के लिए दिया। नीचे लिखे अंक उसपर उभरे हुए थे। ये खोपड़ी और बकरी की लाल स्याही से बनी शक्लों के बीच थे। अंक इस प्रकार थे :

"53‡‡†305))6*;4826)4‡.)4‡);806*;48†8¶60))85;1‡(;:‡*
8†83(88)5*†;46(;88*96*?;8)*‡(;485);5*†2:*‡(;4956*2(5*—4)
8¶8*;4069285);)6†8)4‡‡;1(‡9;48081;8:8‡1;48†85;4)485†5288
06*81(‡9;48;(88;4(‡?34;48)4‡;161;:188;‡?;"

मैंने कागज़ वापस करते हुए कहा, "मैं तो पहले ही की तरह अब भी अंधेरे में हूं। यदि गोलकुण्डा के सारे हीरे भी मुझे उपर्युक्त पहेली को सुलझा लेने के बाद मिल जाने वाले हों तो भी मैं इसे सुलझाने में अपने आपको असमर्थ ही पाऊंगा।"

"फिर भी पहेली का सुलझाया जाना उतना कठिन नहीं है जितना वह उक्त अंकों और चिह्नों की माला देखकर लगता है,' लेग्राण्ड ने कहा, "ये अंक देखते ही कोई भी कह देगा कि गुप्त भाषा में हैं। इसका मतलब यह है कि ये सार्थक हैं। किन्तु किड के बारे में जो कुछ मालूम है, उससे मैं यह जानता था कि वह कोई नई गुप्त भाषा नहीं बना सकता है। उसमें नई गुप्त भाषा बनाने की योग्यता ही नहीं थी। मैं तत्काल समझ गया कि यह गुप्त भाषा साधारण बुद्धि वाले नाविक की है और इसको सुलझाने के लिए किसी कुंजी की ज़रूरत नहीं है।"

"और फिर तुमने उसे सुलझा भी लिया?"

"और क्या? मैंने इससे दस हज़ार गुनी अधिक उलझी भाषाओं को पढ़ा है और उनका मतलब निकाला है। कुछ तो परिस्थितियों-वश और कुछ अपनी मनोवृत्ति के कारण मुझे ऐसी पहेलियों को सुलझाने में बड़ा मज़ा आता है। और अभी ऐसी मौलिक बुद्धि वाला कोई आदमी पैदा नहीं हुआ है जो कोई पहेली बना दे और उसे दूसरा अक्लमन्द, अगर वह अक्ल का सही-सही उपयोग करे तो भी, सुलझा न सके। एक बार अंकों के स्पष्ट होते ही मेरे दिमाग में फिर यह ख्याल भी नहीं आया कि प्रयत्न करने पर मैं उनका अर्थ न निकाल सकूंगा।

"हर गुप्त लेख में और इसमें भी पहली कठिनाई यह जानने में